श्री भगवद्
अर्चन-विधि

श्री चैतन्य गौड़ीय मठ

श्री श्रीमद् भक्ति बल्लभ तीर्थ गोस्वामी महाराज

श्री भगवद्
अर्चन-विधि

(संकलित)

श्रीमद्भक्ति बल्लभ तीर्थ
गोस्वामी महाराज

श्री चैतन्य गौड़ीय मठ
(वृन्दावनधाम)

प्राप्ति स्थान:

1. श्री चैतन्य गौड़ीय मठ, सैक्टर 20-बी, चण्डीगढ़-160020
2. श्री चैतन्य गौड़ीय मठ, ईशोद्यान, श्रीधाम मायापुर-741313;
जिला– नदिया; पश्चिम बंगाल
3. श्री चैतन्य गौड़ीय मठ, 35 सतीश मुखर्जी रोड,
कोलकत्ता-700026; पश्चिम बंगाल
4.श्री चैतन्य गौड़ीय मठ, मथुरा रोड, वृन्दावन-281121;
जिला– मथुरा
5.श्री चैतन्य गौड़ीय मठ, 3399, हरिमन्दिर गली, पहाड़गंज,
नई दिल्ली - 110055

द्वितीय संस्करण: 2026

त्रुटि सुधार हेतु विशेष निवेदन: इस ग्रन्थ को शुद्ध एवं त्रुटिरहित बनाने का पूर्ण प्रयास किया गया है, फिर भी यदि इसमें कोई वर्तनीगत या तथ्यात्मक त्रुटि आपके संज्ञान में आती है, तो कृपया हमें निम्नलिखित माध्यमों से सूचित करें ताकि आगामी संस्करण में उसे सुधारा जा सके:

ई-मेल (Email): info@bbtirtha.org
व्हाट्सएप (WhatsApp): +91 9350889966
वेबसाइट (Web): www.bbtirtha.org | www.sreecgmath.org
मोबाइल ऐप (App): bbtirtha (Play Store/App Store पर उपलब्ध)

विषय सूची

निवेदन	4
अनुवाद सम्पादक के दो शब्द	9
श्री भगवद्-अर्चन विधि	15
अर्चन की आवश्यकता	21
श्रीविग्रह तत्त्व	26
श्री चैतन्य गौड़ीय मठ में विग्रह–सेवा प्रकाश	28
अधिकार-निर्णय	29
अर्चन एवं भजन	31
सेवापराध विचार	33
श्रीविष्णु का पञ्चाङ्ग अर्चन	37
अर्चन के प्रारम्भिक नित्य कृत्य-1	39
अर्चन के प्रारम्भिक नित्य कृत्य-2	42
अर्चन के प्रारम्भिक नित्य कृत्य-3	46
पूजोपकरणसमूह, तुलसी–पुष्पचयन विधि, पुष्पशुद्धि इत्यादि	54
भगवद्-विग्रह को जगाना और मंगल–आरती की विधि	57
भगवान् को भोग निवेदन करने की विधि	60
पूर्वाह्न (प्रातः काल में) में श्रीविग्रह पूजा	62
गुरु पूजा	71
श्री गौराङ्ग पूजा	79
श्री श्री राधाकृष्ण पूजा	86
उपाङ्ग पूजा	98
तुलसी सेवा	99
महाप्रसाद सम्मान कीर्तन	100
मध्यान्हकालीन भोग एवं आरती	102
श्रीपुरुषसूक्त मन्त्र द्वारा भगवद् अर्चन विधि	108

निवेदन

बहुत ही आनन्द का विषय है कि सम्पूर्ण भारत में व्याप्त श्री चैतन्य गौड़ीय मठ प्रतिष्ठान के प्रतिष्ठाता परम पूजनीय, गौड़ीय वैष्णवाचार्य प्रवर, नित्यलीला प्रविष्ट त्रिदण्डि स्वामी श्री श्रीमद् भक्ति दयित माधव गोस्वामी महाराज की परम शुभदायिनी अविर्भाव तिथि (श्री श्री उत्थान एकादशी) के शुभ अवसर पर पूज्यपाद महाराज के सुयोग्य अधःस्तन एवं श्रीमठ के वर्तमान अध्यक्ष एवं आचार्य त्रिदण्डि स्वामी श्री श्रीमद् भक्ति बल्लभ तीर्थ गोस्वामी महाराज की सम्पादकता में कलकत्ता मठ मुद्रणालय (Press) से 'श्री भगवद् अर्चन विधि' नामक एक संक्षिप्त ग्रन्थ प्रकाशित हुआ है।

श्रीग्रन्थरत्न के प्रारम्भ में मंगलाचरण व श्रीहरि-गुरु-वैष्णवों के पादपद्म तथा श्रीधाम के चरणों में प्रणति सूचक श्लोक दिये गये हैं। इस के पश्चात् परमाराध्य जगद्-गुरु श्रील प्रभुपाद नित्यलीला प्रविष्ट 108 श्री श्रीमद् भक्ति सिद्धान्त सरस्वती गोस्वामी की विचारधारा के अनुसार अर्चन की आवश्यकता, श्रीविग्रह तत्त्व, अर्चन तथा भजन की विशेषता, अधिकार–निर्णय, श्री चैतन्य मठ, श्री गौड़ीय मठ तथा श्री चैतन्य गौड़ीय मठ में श्रीविग्रह–सेवा प्रकाश, सेवापराध–विचार एवं श्रीविष्णु के पञ्चाङ्ग-अर्चन के कुछ प्रमुख विचारणीय प्रसंग लिपिबद्ध किए गये हैं, जो कि प्रत्येक दीक्षा प्राप्त भक्त के लिए अवश्य जानने योग्य हैं। इसके अतिरिक्त अर्चन के प्रारम्भिक नित्यकृत्य, पूजा के उपकरण, तुलसी-पुष्पादि चयन विधि तथा पुष्पादि-शुद्धि-मन्त्र, भगवद्-विग्रह का जागरण, मंगल-आरती, भोग-निवेदन की प्रणाली, प्रातःकाल में श्रीविग्रह की पूजा, श्रीगुरु-गौरांग एवं श्रीराधा-कृष्ण की पूजा-पद्धति, श्रीपुरुषसूक्त मन्त्र द्वारा सोलह प्रकार के उपचारों से भगवद्-पूजा एवं उपाङ्ग-

पूजा विधि दी गई है। इसके बाद मध्याह्न काल में होने वाली भोग-आरती की विधि, श्री तुलसी-सेवा, महाप्रसाद ग्रहण के समय करने योग्य कीर्तन तथा अपराह्न, सन्ध्या एवं रात्रि में भगवान् की सेवा के लिए करणीय कुछ आवश्यक बातें संक्षेप में बतलाई गई हैं। अन्त में पञ्चामृत-शोधन-मन्त्र तथा प्रयोग विधि दी गई है। इस प्रकार श्रीविग्रह के अर्चन के सम्बन्ध में जानने योग्य प्राय: सभी विषय इस ग्रन्थ में संक्षेप में प्रस्तुत किए गये हैं।

सद्-गुरु के पाद-पद्मों में दीक्षित प्रत्येक भक्त के लिए अर्चन करना अत्यावश्यक है—ऐसा शास्त्रों में विशेष रूप से वर्णित है। सात्त्वत स्मृतिराज 'श्रीहरिभक्तिविलास' के द्वितीय विलास में उद्धरित विष्णुयामल वाक्य में लिखा है कि श्री गुरुदेव अतन्द्रित (आलस्य रहित) होकर एक वर्ष तक शिष्य की परीक्षा करेंगे एवं उसे एक सौ चार विधि एवं निषेध सूचक नियम श्रवण कराएँगे। उसमें भक्ति के साथ श्रीशालग्राम शिला एवं मूर्ति आदि में अपने ईष्ट देवता की पूजा की बात भी विशेष रूप से बताई गयी है।

पद्म पुराण में श्रीशालग्राम शिला की पूजा की नित्यता की बात कही गयी है।

शालग्रामशिलापूजां बिना योऽश्नाति किञ्चन ।
स चण्डालादि-विष्ठायाम्-आकल्पं जायते कृमि: ॥
(ह.भ.वि. 5/222)

अर्थात् पद्म पुराण में लिखा है कि जो व्यक्ति श्रीशालग्राम का अर्चन किए बिना भोजन करता है, उसे अति लम्बे समय तक चण्डालादि की विष्ठा का कीड़ा बनकर रहना पड़ता है।

स्कन्दपुराण में इस प्रकार कहा गया है :-

गौरवाचलश्रृगांग्रैर्भिद्यते तस्य वै तनु: ।
न मतिर्जायते यस्य शालग्रामशिलार्चने ॥

एवं श्रीभगवान् सर्वै: शालग्रामशिलात्मक: ।
द्विजै: स्त्रीभिश्च शूद्रैश्च पूज्यो भगवत: परै:॥
(ह. भ. वि. 223 संख्या)

स्कन्द पुराण में लिखा है कि शालग्राम शिला के अर्चन में जिस व्यक्ति की रति-मति नहीं होती, उस व्यक्ति को पहाड़ की चोटी से गिरा कर शारीरिक यातनाएँ दी जाती है।

अतः प्रत्येक व्यक्ति के लिए आवश्यक है कि वह शास्त्र के विधानानुसार दीक्षा ग्रहण करके दृढ़ श्रद्धा भक्ति के साथ भगवान् का अर्चन करे। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, स्त्री अथवा शूद्र सभी को दीक्षा के पश्चात् शालग्राम रूपी भगवान का अर्चन करने का अधिकार है।[1]

श्रील सनातन गोस्वामीपाद उपरोक्त श्लोक के 'भगवतः परैः' वाक्य की टीका में लिखते हैं -"यथाविधि दीक्षा गृहीत्वा भगवत् पूजा परैः सद्भिरित्यर्थः" अर्थात् शास्त्र-विधि के अनुसार दीक्षा प्राप्त भगवद् पूजा-परायण स्त्री, शूद्र आदि कोई भी हो, वह भगवद् पूजा कर सकता है। किन्तु हरिभक्ति-विहीन होने पर द्विज-जाति को भी उसमें अधिकार नहीं है—यही सत्शास्त्रों का अभिप्राय है।

बहुत से लोग पञ्चरात्रिक विधानानुयायी अर्चन एवं भागवत् विधानानुयायी नाम-भजन-विचार वैशिष्ट्य न समझ पाने के कारण अर्चन पद्धति के प्रति अनादर का भाव मन में रखते हैं—इस विषय में श्रीजीव गोस्वामी श्रीमद् भागवत् के (7/5/23-24) श्लोक की क्रमसन्दर्भ की टीका के मर्म में इस प्रकार लिखते हैं - "हरिनाम इतना शक्तिशाली है कि केवल श्रीहरिनाम से ही जीवों को भगवान् का सुदुर्लभ, सुनिर्मल प्रेम प्राप्त हो सकता है, तो अल्प सामर्थ्यवान मन्त्रादि-दीक्षा ग्रहण करने की क्या आवश्यकता है?" इसके उत्तर में वे स्वयं ही लिखते हैं कि यह ठीक है कि हरिनाम के द्वारा ही सुदुर्लभ

1 श्रीश्यामाचरण कविरत्न द्वारा सम्पादित ह.भ.वि. के अनुवाद से उद्धृत

भगवद्-प्रेम प्राप्त हो सकता है तथा इसके लिए मन्त्र दीक्षादि की कोई आवश्यकता नहीं है, तथापि स्वभावतः देहादिसंसर्गवशतः (शरीर से संसर्ग होने के कारण) कदर्य स्वभाव (घृणित स्वभाव) से विक्षिप्त चित्त वाले जीवों की इन सब वृत्तियों को संकुचित करने के लिए ही महर्षि श्री नारद आदि महाजनों ने इस अर्चनमार्ग में कहीं-कहीं पर विशेष मर्यादा (विधि व नियमों) की स्थापना की है, जिसका उल्लंघन होने के साथ-साथ में प्रायश्चित का विधान भी शास्त्रों में उल्लेखित किया गया है। अतएव महामन्त्र, श्रीनामदीक्षा एवं मन्त्रदीक्षा दोनों अनुष्ठान ही संगत व उपयुक्त हैं।

श्रील जीव गोस्वामीपाद ने दीक्षा प्राप्त गृहस्थ भक्तों विशेषत: सम्पत्तिशाली गृहस्थ भक्तों के लिए अर्चनमार्गीय विधि का पालन करने की अत्याधिक आवश्यकता को प्रदर्शित किया है। तथापि कलिकाल में कीर्तन भक्ति की ही प्रधानता होने के कारण "यद्यपि अन्य भक्तिः कलौ कर्त्तव्य तदा किर्तानाख्य भक्ति संयोगेनैव" अर्थात् कलिकाल में भक्ति के अन्य साधन को भी कीर्तन-भक्ति के साथ में ही करना परम आवश्यक है—इस विचार को अवश्य पालन करना चाहिए।

भक्ति के अनन्त अंग होने पर भी श्रील रूप गोस्वामीपाद व श्रील कविराज गोस्वामी आदि प्रमुख महाजनों ने 'साधु–सङ्ग, नाम–कीर्तन, भागवत्-श्रवण, मथुरावास तथा श्रद्धा पूर्वक श्रीविग्रह सेवा' - इन पाँच अंगों की श्रेष्ठता बताई है।

इसके अतिरिक्त "एक अंग साधे किम्बा साधे बहु अंग, निष्ठा हैते उपजय प्रेमेर तरंग" - इस वाक्य के द्वारा प्रेमोदय के होने में निष्ठा रूपी भजन की विशेष प्रयोजनीयता देखी जाती है। चूंकि प्रेम-सम्पदा ही चरम प्रयोजन है, अत: श्रील सनातन गोस्वामीपाद ने संकीर्तन को ही उस प्रेम-सम्पदा को प्राप्त करने का महाबलिष्ठ तथा श्रेष्ठ साधन बताया है। इसीलिए अर्चनादि मार्ग कीर्तन भक्ति

के साथ ही अनुसरणीय है।

यह ठीक है कि विधि मार्ग में ब्रज भाव को प्राप्त करवाने की शक्ति नहीं है। इसीलिए राग मार्ग में प्रवेश पाने के इच्छुक साधकों को “विधि मार्ग रत जने, स्वाधीनता रत्नदाने, राग मार्गे करान प्रवेश” - इस महाजन वाक्य का सदैव स्मरण रखना होगा। ‘प्रेम्नैव भक्त हृदयं सुख विधुत स्यात्’ अर्थात् प्रेम के द्वारा ही भक्त-हृदय वास्तविक चिद्-सुख में विशेष भाव से द्रवीभूत होता है। इस ग्रन्थ के सम्पादक पूजनीय तीर्थ महाराज ने इस ग्रन्थ में अर्चनकारी के जानने योग्य बहुत से विषयों को एकत्रित करके इसे सर्वांग सुन्दर बनाया है। अन्त में भक्ति-रसास्वादन के अभिलाषी सभी वैष्णवों को हम श्रद्धा तथा यत्नपूर्वक इस ग्रन्थ के अनुशीलन हेतु विनम्र अनुरोध करते हैं।

उत्थान एकादशी :
26 दामोदर, 499 गौराब्द
7 अग्रहायण, 1392 बंगाब्द
23 नवम्बर, 1985 ख्रिष्टाब्द

इति-
वैष्णवदासानुदास
त्रिदण्डिभिक्षु श्री भक्ति प्रमोद पुरी
(सम्पादक संघपति ‘श्री चैतन्य वाणी’)

(मूलत: यह ग्रन्थ बांग्ला भाषा में सन् 1985 तथा 1995 में प्रकाशित हुआ था। प्रस्तुत निवदेन उसी मूल ग्रन्थ से लिया गया है)

अनुवाद–सम्पादक के दो शब्द

प्रिय पाठक/पाठिकाओं ।

आपके हाथों में जो ग्रन्थ है इस ग्रन्थ को मेरे ज्येष्ठ गुरु भ्राता तथा श्री चैतन्य गौड़ीय मठ के वर्तमान आचार्य परम पूज्यपाद त्रिदण्डि स्वामी श्री श्रीमद् भक्ति बल्लभ तीर्थ महाराज ने बहुत परिश्रम के साथ सम्पादित किया है। जो भी साधक इस छोटे से ग्रन्थ को ध्यान पूर्वक पढ़ेगा वह निश्चय ही परमार्थ–राज्य की ओर जाने वाले मार्ग से परिचित हो जाएगा क्योंकि प्रस्तुत ग्रन्थ में श्रीहरि, गुरुदेव व भक्तों की सेवा करने की विधियाँ, सन्ध्या-वन्दना करने की विधियाँ व प्रात:काल से रात्रि: तक दिनचर्या व्यतीत करने की वैदिक प्रणाली बताई गई है।

उपरोक्त सभी प्रयासों के पश्चात् भी यदि किसी पाठक को इस पुस्तक में लिखी कोई बात समझ में न आए तो वह चण्डीगढ़ मठ के पते पर (जो कि ग्रन्थ के प्रारम्भ में लिखा है) पत्र व्यवहार कर सकता है।

मैने आचार्य देव की मूलभावना को हिन्दी रूपान्तरण में यथावत् बनाए रखने की चेष्टा की है । कहीं - कहीं पर ऐसे वाक्यों को जिनमें बांग्ला भाषा की कठिनता प्रतीत होती थी या जिसे हिन्दी भाषी समझ नहीं पाते, उन वाक्यों को मैंने सरल हिन्दी भाषा में प्रस्तुत करने का पूर्ण प्रयास किया है। आशा है कि विज्ञ पाठकगण उनकी उपादेयत्ता का अनुभव करेंगे ।

प्रस्तुत ग्रन्थ का हिन्दी अनुवाद कराने में मेरे गुरुभाई

पूज्यपाद त्रिदण्डि स्वामी श्री भक्ति निकेतन तूर्याश्रमी महाराज तथा चिद् घनानन्द दास बह्मचारी ने मेरी बहुत सहायता की है। मैं उनका चिरकृतज्ञ हूँ। इसके अतिरिक्त जिन्होंने किसी भी प्रकार से इस पुस्तक के प्रकाशन में सहयोग किया है, उनके प्रति भी मैं अपनी आन्तरिक कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ एवं उनके मंगल की कामना करता हूँ।"

इति
वैष्णवदासाभास
बी. एस. निष्किंचन

विशेष सूचना

"पाठकों के लिए विशेष ध्यातव्य:"

प्रस्तुत ग्रन्थ के मूल सम्पादक परम पूज्यपाद त्रिदण्डी स्वामी श्री श्रीमद् भक्ति बल्लभ तीर्थ महाराज श्री अब इस धराधाम पर प्रकट नहीं हैं और 20 अप्रैल, 2017 को नित्य-लीला में प्रविष्ट हो चुके हैं।

वर्तमान संस्करण में, श्री चैतन्य गौड़ीय मठ के शिष्यों एवं प्रशिष्यों की सुविधा और उनकी भजन-प्रणाली को पूर्णता प्रदान करने हेतु, हमने ग्रन्थ में महाराज श्री का 'प्रणाम मन्त्र' एवं 'जय ध्वनि' भी विशेष रूप से सम्मिलित की है। आशा है कि इससे साधकों को उनके प्रति अपनी श्रद्धा और शरणागति व्यक्त करने में और भी सुगमता होगी।

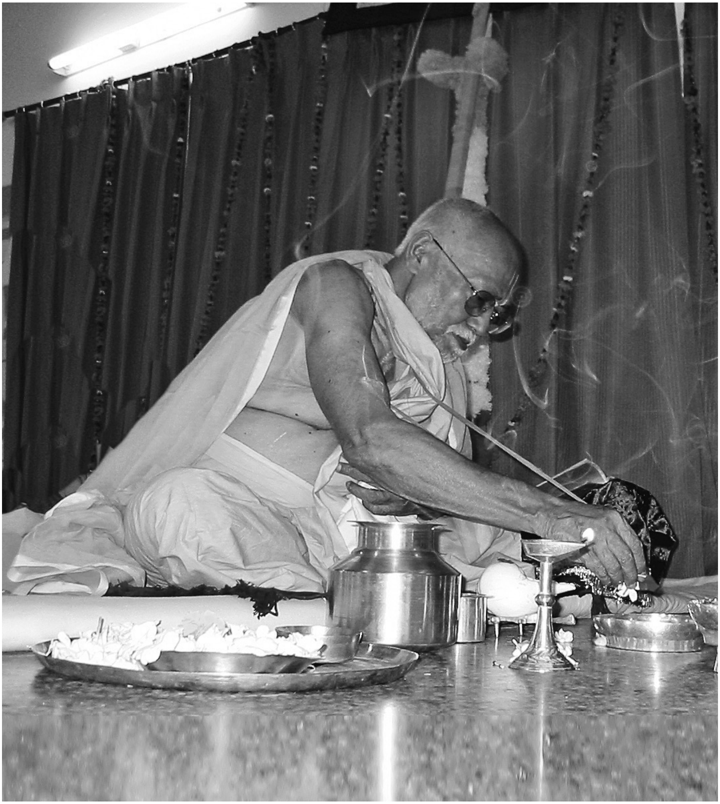

नित्यलीला प्रविष्ट ॐ विष्णुपाद 108 श्री श्रीमद् भक्ति बल्लभ तीर्थ गोस्वामी महाराज जी

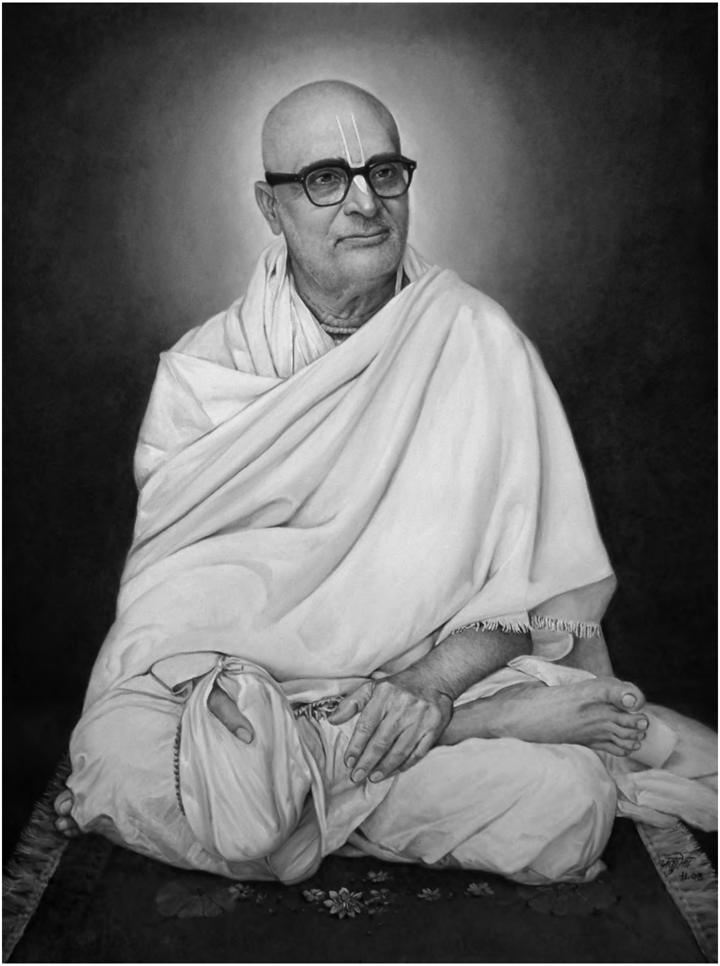

नित्यलीला प्रविष्ट ॐ विष्णुपाद 108 श्री श्रीमद् भक्ति
दयित माधव गोस्वामी महाराज जी

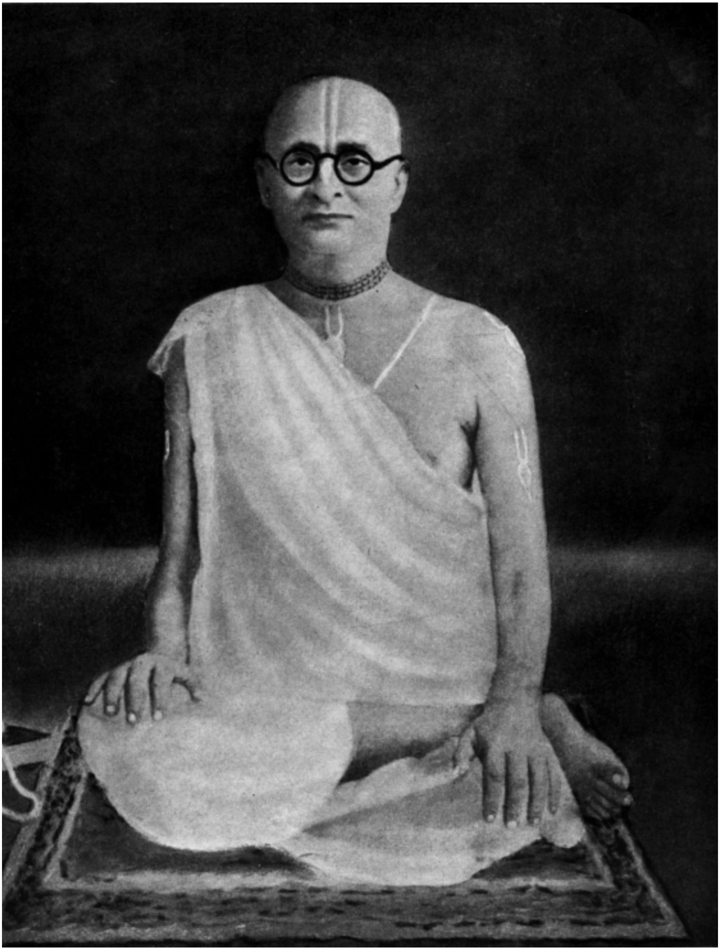

नित्यलीला प्रविष्ट ॐ 108 श्री श्रीमद् भक्ति सिद्धान्त सरस्वती गोस्वामी प्रभुपाद जी

श्री श्रीगुरु गौरांगौ श्री श्री राधा गोविन्द जी

श्री श्रीगुरु गौरांगौ जयतः

श्री भगवद् अर्चन विधि

मंगलाचरण

वन्देऽहं श्रीगुरो: श्रीयुतपद–कमलं श्रीगुरुन् वैष्णवांश्च
श्रीरूपं साग्रजातं सहगण-रघुनाथान्वितं तं सजीवम् ।
साद्वैतं सावधूतं परिजन सहितं कृष्ण-चैतन्य-देवम्
श्रीराधा-कृष्ण-पादान् सहगण-ललिता-श्रीविशाखान्वितांश्च ॥

श्रीगुरुदेव - प्रणाम

ॐ अज्ञान तिमिरान्धस्य ज्ञानाञ्जन शलाकया ।
चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥
नामश्रेष्ठं मनुमपि शचीपुत्रमत्र स्वरूपं
रूपं तस्याग्रजमुरुपुरीं माथुरीं गोष्ठवाटीम् ।
राधाकुण्डं गिरिवरमहो राधिकामाधवाशां
प्राप्तो यस्य प्रथितकृपया श्रीगुरुं तं नतोऽस्मि ॥

श्रील तीर्थ गोस्वामी वन्दना

नमः ॐ विष्णुपादाय श्रीगौर प्रियमूर्तये।
श्रीमते भक्तिवल्लभ-तीर्थ गोस्वामिनामिने॥
मायावाद विखण्डनं गुरोर्वाण्यनुकीर्तनम्।
पाश्चाद्देशोपदेशकं प्रसन्नवदनं सदा॥
शुद्धा-भक्ति प्रवाहकं शुद्धा-भक्ति-भगीरथम्।
भक्तिदयित माधवाभिन्न तनुं नमाम्यहम्॥
नामसंकीर्तनामृत रसास्वादविधायकम्।
कृष्णाम्नायकृपामूर्तिं आचार्यं तं नमाम्यहम्॥

गौर-नाम प्रचारार्द्रं भक्तसेवानुकांक्षिणम्।
सतीर्थ प्रीति सद्भावं नौमि तीर्थ महाशयम्॥

श्रील माधव गोस्वामी - वन्दना

नमः ॐ विष्णुपादाय रूपानुग प्रियाय च ।
श्रीमते भक्तिदयितमाधवस्वामी–नामिने ॥
कृष्णाभिन्न-प्रकाश–श्रीमूर्तये दीनतारिणे ।
क्षमा-गुणावताराय गुरवे प्रभुवे नमः ॥
सतीर्थ प्रीतिसद्धर्म–गुरुप्रीति–प्रदर्शिने ।
ईशोद्यान–प्रभावस्य प्रकाशकाय ते नमः ॥
श्रीक्षेत्रे प्रभुपादस्य स्थानोद्धार-सुकीर्तये ।
सारस्वत गणानन्द–संवर्धनाय ते नमः ॥

श्रील प्रभुपाद - वन्दना

नमः ॐ विष्णुपादाय कृष्ण-प्रेष्ठाय भूतले ।
श्रीमते भक्तिसिद्धान्त-सरस्वतीति-नामिने ॥
श्रीवार्षभानवी-देवी-दयिताय कृपाब्धये ।
कृष्ण-सम्बन्ध-विज्ञान-दायिने प्रभवे नमः ॥
माधुर्योज्जवल-प्रेमाढ्य - श्रीरूपानुग-भक्तिद्।
श्रीगौर-करुणा-शक्ति-विग्रहाय नमोऽस्तु ते ॥
नमस्ते गौर-वाणी-श्रीमूर्तये दीन-तारिणे ।
रूपानुग-विरुद्धाऽपसिद्धान्त-ध्वान्त-हारिणे ॥

श्रील गौरकिशोर – वन्दना

नमो गौरकिशोराय साक्षाद्वैराग्य मूर्तये ।
विप्रलम्भ-रसाम्भोधे! पादाम्बुजाय ते नमः ॥

श्रील भक्तिविनोद – वन्दना

नमो भक्ति-विनोदाय सच्चिदानन्द-नामिने ।
गौर-शक्ति-स्वरूपाय रुपानुग-वराय ते ॥

श्रील जगन्नाथ – वन्दना

गौराविर्भाव-भूमेस्त्वं निर्देष्टा सज्जन-प्रियः।
वैष्णव-सार्वभौम-श्रीजगन्नाथाय ते नमः॥

श्रीवैष्णव – वन्दना

वाञ्छा-कल्पतरुभ्यश्च कृपा-सिन्धुभ्य एव च ।
पतितानां पावनेभ्यो वैष्णवेभ्यो नमो नमः ॥

श्रीमन्महाप्रभु – वन्दना

नमो महावदान्याय कृष्ण-प्रेम-प्रदाय ते ।
कृष्णाय कृष्ण-चैतन्य-नाम्ने गौरत्विषे नमः ॥

श्रीनित्यानन्दप्रभु - प्रणाम:

सङ्कर्षणः कारणतोयशायी गर्भोदशायी च पयोब्धिशायी ।
शेषश्च यस्यांशकला: स नित्यानन्दाख्यराम: शरणं ममास्तु ॥

श्रीअद्वैत - प्रणाम:

महाविष्णुर्जगत्कर्ता मायया य: सृजत्यद: ।
तस्यावतार एवायमद्वैताचार्यं ईश्वर: ॥
अद्वैतं हरिणाद्वैताचार्य। भक्तिशंसनात् ।
भक्तावतारमीशं तमद्वैताचार्यमाश्रये ॥

श्रीगदाधर - प्रणाम:

श्रीह्लादिनी - स्वरूपाय गौरांग-सुहृदे सते ।
भक्तशक्ति - स्वरूपाय गदाधर ! नमोऽस्तु ते ॥

श्रीवास - प्रणाम:

श्रीवास - पण्डितं नौमि गौरांग-प्रिय-पार्षदम् ।
यस्य कृपा - लवेनापि गौरांगे जायते रति: ॥

पञ्चतत्व - प्रणाम:

पञ्चतत्वात्मकं कृष्णं भक्त-रूप-स्वरुपकम् ।
भक्तावतारं भक्ताख्यं नमामि भक्त-शक्तिकम् ॥

श्री बलदेव - प्रणाम:

नमस्ते तु हलग्राम! नमस्ते मुषलायुध!।
नमस्ते रेवतीकान्त! नमस्ते भक्तवत्सल!।।
नमस्ते बलिनां श्रेष्ठ! नमस्ते धरणीधर!।
प्रलम्बारे! नमस्ते तु त्राहि मां कृष्ण-पूर्वज!।।

प्रार्थना

नमो ब्रह्मण्यदेवाय गो-ब्राह्मण हिताय च ।
जगद्-हिताय कृष्णाय गोविन्दाय नमो नमः ॥

श्री जगन्नाथ देव - प्रणाम:

भुजे सव्ये वेणुं शिरसि शिखिपिच्छं कटितटे ।
दुकूलं नेत्रान्ते सहचर-कटाक्षं च विद्धते ॥
सदा श्रीमद्वृन्दावन-वसति-लीलापरिचयो ।
जगन्नाथ: स्वामी नयनपथगामी भवतु मे ॥

महाम्भोधेस्तीरे कनकरुचिरे नीलशिखरे ।
वसन् प्रसादान्त: सहज-बलभद्रेण बलिना ॥
सुभद्रा - मध्यस्थ: सकल-सुर-सेवावसरदो ।
जगन्नाथ: स्वामी नयनपथगामी भवतु मे ॥

श्रीकृष्ण - प्रणाम:

हे कृष्ण ! करुणासिन्धो ! दीनबन्धो ! जगत्पते !
गोपेश! गोपिकाकान्त ! राधाकान्त ! नमोःस्तुते ॥

श्रीसम्बन्धाधिदेव – प्रणाम:

जयतां सुरतौ पङ्गोर्मम मन्द-मतेर्गती ।
मत्सर्वस्व पदाम्भोजौ श्रीराधा–मदनमोहनौ ॥

श्रीअभिधेयाधिदेव – प्रणाम:

दीव्यद्-वृन्दारण्य-कल्पद्रुमाध: श्रीमद् रत्नागार-सिंहासनस्थौ ।
श्रीश्रीराधा-श्रीलगोविन्द-देवौ, प्रेष्ठालीभिः सेव्यमानौ स्मरामि ॥

श्रीप्रयोजनाधिदेव - प्रणाम:

श्रीमान् रासरसारम्भी वंशीवट-तटस्थित: ।
कर्षन् वेणुस्वनैर्गोपीर्गोपीनाथ: श्रियेऽस्तु न: ।

श्रीराधा - प्रणाम:

तप्तकाञ्चनगौराङ्गि ! राधे ! वृन्दावनेश्वरी !
वृषभानुसुते ! देवि ! प्रणमामि हरिप्रिये ! ॥

श्रीतुलसी - प्रणाम:

वृन्दायै तुलसी देव्यै प्रियायै केशवस्य च ।
कृष्णभक्ति-प्रदे देवि ! सत्यवत्यै नमो नम: ॥

श्री नृसिंह - प्रणाम:

इतो नृसिंह: परतो नृसिंहो यतो यतो यामि ततो नृसिंह: ।
बहिर्नृसिंहो हृदये नृसिंहो नृसिंहमादिं शरण प्रपद्ये ॥
नमस्ते नृसिंहाय प्रह्लदाह्लाद - दायिने ।
हिरण्यकशिपोर्वक्ष: शिलाटङ्क - नखालये ॥

वागीशा यस्य वदने लक्ष्मीर्यस्य च वक्षसि ।
यस्यास्ते हृदये संवित् तं नृसिंहमहं भजे ॥
श्री नृसिंह जय नृसिंह जय जय नरसिंह ।
प्रह्लादेश जय-पद्म मुखपद्मभृंग ॥

श्रीक्षेत्रपाल- शिव - प्रणाम:

वृन्दावनावनिपते! जय सोम! सोममौले!
सनक-सनन्दन-सनातन-नारदेड्य!
गोपीश्वर! व्रजविलासि-युगाङ्घ्रि-पद्मे
प्रीतिं प्रयच्छ नितरां निरूपाधिकां मे ॥

श्रीधाम - नवद्वीप - वन्दना

श्रुतिश्छान्दोग्याख्या वदति परमं ब्रह्मपुरकं
स्मृतिर्वैकुण्ठाख्यं वदति किल यद्विष्णुसदनम् ।
श्वेतद्वीपं चान्ये विरलरसिको यं व्रजवनं
नवद्वीपं वन्दे परमसुखदं तं चिदुदितम् ॥

श्रीधाम - मायापुर वन्दना

भूमिर्यत्र सुकोमला बहुविधप्रद्योतिरत्नच्छटा
नानाचित्रमनोहरं खगमृगाद्याश्चर्यरागान्वितम् ।
बल्लीभूरुहजातयोऽद्भुततमा यत्र प्रसूनादिभि-
स्तन्मे गौरकिशोर-केलि-भवनं मायापुरं जीवनम् ॥

अर्चन की आवश्यकता

कृष्ण मन्त्र हैते हबे संसार मोचन ।
कृष्णनाम हैते पाबे कृष्णेर चरण ॥
नाम बिना कलिकाले नाहि आर धर्म ।
सर्वमन्त्र सार नाम एइ शास्त्र-मर्म ॥
एत बलि एक श्लोक शिखाइल मोरे ।
कण्ठे करि एइ श्लोक करिह विचारे ॥
(चै. च. आ. 7/73-75)

हरेर्नाम हरेर्नाम हरेर्नामैव केवलम् ।
कलौ नास्तयेव नास्तयेव नास्तयेव गतिरन्यथा ॥
(बृहन्नारदीय पुराण 38/26)

श्री श्रील भक्ति सिद्धान्त सरस्वती गोस्वामी ठाकुर ऊपर लिखे विषय पर आलोचना करते हुए लिखते हैं कि सत्य, त्रेता और द्वापर इन तीनों युगों में श्रौत पथ का आदर था, किन्तु इस युग में कलिकाल की प्रवृति के साथ-साथ अनेक अश्रौत व तर्कपन्थ उत्पन्न हो गये हैं जो कि श्रुति विरोधी हैं। ऐसे लोगों के मत का आधार नाशवान व सीमित इन्द्रिय-जनित ज्ञान है, जबकि वास्तव वस्तु (भगवान) असीम व इन्द्रियातीत हैं। यही कारण है कि इन लोगों का असीम वस्तु के अवरोहण के विषय में संदेह युक्त होना श्रुति विरोधी हो पड़ता है। कृष्ण-नाम वैकुण्ठ वस्तु है। इसीलिए वह वास्तव-वस्तु "श्रीकृष्ण" से सम्पूर्णतया अभिन्न है अर्थात वैकुण्ठ वस्तु "कृष्ण नाम" और वास्तव वस्तु "श्रीकृष्ण" में कोई भी अन्तर नहीं है। वास्तव वस्तु श्रीकृष्ण जिस प्रकार से नित्य, शुद्ध, पूर्ण,

मुक्त, चैतन्य रस के विग्रह एवं अप्राकृत चिन्तामणि हैं; वैकुण्ठ वस्तु "कृष्ण नाम" भी उसी प्रकार नित्य, शुद्ध, पूर्ण, मुक्त, चैतन्य रस का विग्रह व अप्राकत चिन्तामणि हैं। इस हरिनाम में तर्कपंथी लोगों का कोई अधिकार नहीं है। एकमात्र हरिनाम के भजन से ही स्थूल व सूक्ष्म उपाधियाँ विनष्ट होती हैं तथा एकमात्र स्वयं नाम ही तर्कपन्थियों के तर्क से अतीत नामी वस्तु है ।

वैकुण्ठ वस्तु "हरिनाम" ही सांसारिक भोग चिन्ताओं से पीड़ित जीवों का परित्राण करने में समर्थ है, इसीलिए, हरिनाम को सर्वमन्त्र-सार भी कहते हैं । जड़ीय वस्तु के नाम, रूप, गुण, भाव व क्रिया तर्क-पथ के अधीन हैं; किन्तु वैकुण्ठ नाम इस प्रकार नहीं हैं। वैकुण्ठ नाम के अप्राकृत नाम, रूप, गुण, लीला व परिकर वैशिष्ट्य "अद्वयज्ञान" में अवस्थित हैं। मायावादी लोग अपने इन्द्रिय-जन्य ज्ञान के द्वारा भगवान के नाम, रूप, गुण, लीला आदि को भी मायिक समझते हैं तथा अधःपतित होते हैं।

मायावादी लोगों के उपदेष्टा लोग 'सदैव सौम्येदमग्र आसीत्' तथा 'सर्व खल्विदं ब्रह्म' इत्यादि महावाक्यों के द्वारा अपने अनुगत जनों को प्राकृत बन्धनों से मुक्त कराते हैं; परन्तु शुद्ध हरिनामाश्रय को छोड़ कर नामापराध द्वारा व्यक्ति (नामापराधी व्यक्ति) इन्द्रियाधीन भोगमय तर्क-पथ से कभी छुटकारा नहीं पा सकते।

श्रील भक्ति सिद्धान्त सरस्वती गोस्वामी प्रभुपाद बृहन्नारदीय पुराण के ('हरेर्नाम हरेर्नाम- - - गतिरन्यथा'।) - श्लोक की व्याख्या करते हुए लिखते हैं कि सत्ययुग में ध्यान के द्वारा जो गति (फल) प्राप्त होती थी, कलियुग में ध्यान के द्वारा वह गति प्राप्त नहीं हो सकती। कलियुग में वह गति निश्चित रूप से केवल हरिनाम के द्वारा ही प्राप्त होगी; त्रेतायुग में जीवों को यज्ञेश्वर के यजन (यज्ञ) के द्वारा जो गति प्राप्त होती थी, कलियुग में वह गति केवल मात्र हरिनाम के द्वारा ही हो सकती है - यज्ञ के द्वारा नहीं। द्वापरयुग में जीवों को

अर्चन के द्वारा जो गति लाभ होती थी, वह गति निश्चित रूप से हरिनाम से ही लाभ होगी - कलियुग में, अर्चन के द्वारा कदापि नहीं। विशेषत: अन्य सभी उपायों के निरर्थक होने के कारण कलियुग में केवल मात्र हरिनाम को छोड़कर अन्य उपायों के द्वारा कोई भी शुभ गति नहीं होगी।

“एक कृष्णनाम करे सर्व-पाप क्षय ।
नवविधा भक्ति पूर्ण नाम हैते हय ॥
दीक्षा[2]-पुरश्चर्या[3]-विधि अपेक्षा न करे ।
जिह्वा-स्पर्शे आ-चांडाल सबरे उद्धारे ॥“
(चै. च. म. 5/107-108)

नामापराधों को छोड़कर, शुद्ध कृष्णनाम का आश्रय लेने पर समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं। यहाँ तक कि जीव की पाप-पुण्य रूपी सांसारिक भोग वासनाएँ भी विनष्ट हो जाती हैं । श्रीहरिनाम ग्रहण करने वाले व्यक्ति ही सब जीवों में श्रेष्ठ एवं पूज्य हैं। श्री नाम

---

2 **दीक्षा-** दिव्य ज्ञानं यतो दद्यात् कुर्यात् पापस्य संक्षयम्,
तस्माद् दीक्षेति सा प्रोक्ता देशिकैस्तत्व कोविदै: ॥
(भक्ति सन्दर्भ-283 संख्या का धृत आगम वाक्य)

अर्थ - जिससे अप्राकृत दिव्य ज्ञान उदय होता है एवं पाप पूरी तरह जड़ से खत्म हो जाते हैं, तत्त्वशास्त्रविद पण्डित लोग उसे ही 'दीक्षा' कहते हैं।

3 **पुरश्चर्या-** पूजा त्रिकालिकी नित्यं जपस्तर्पणमेव च ।
होमो ब्राह्मणभुक्तिश्च पुरश्चरणमुच्यते ॥
गुरुलब्धस्य मन्त्रस्य प्रसादेन यथाविधि ।
पञ्चाङ्गोपासनासिद्ध्यै पुरश्चैतद् विधीयते ॥
(हरिभिक्तिविलास में उद्धृत अगस्त्य संहिता वचन)

अर्थ - प्रात:, मध्याह्न, संध्याह्न - इन तीनों कालों में नित्य पूजा, नित्य जप, नित्य तर्पण, नित्यहोम तथा नित्यब्राह्मण भोजन - इन पाँच अंगों को पुरश्चरण कहते हैं। श्री गुरु की कृपा से प्राप्त मन्त्र की सिद्धि के लिए सर्वप्रथम पञ्चाङ्गोपासना का विधान है, इसीलिए इसे पुरश्चरण कहते हैं ।

भजन से ही नवधा भक्ति पूर्ण हो जाती है। श्रील जीव गोस्वामी जी 'भक्ति सन्दर्भ' की 283 तथा 284 संख्या में हरिनाम ग्रहण करने वाले के विषय में तथा मन्त्र - दीक्षा अथवा अर्चन की प्रयोजनीयता के सम्बन्ध में इस प्रकार लिखते हैं - यद्यपि श्रीमद् भागवत के मतानुसार शरणागति आदि किसी एक के द्वारा ही जब पुरुषार्थ सिद्धि हो सकती है तथा पञ्चरात्र आदि ग्रन्थों के अनुसार अर्चन मार्ग की आवश्यकता नहीं है तथापि जो लोग श्री नारद आदि महाजनों के रास्तों का अनुगमन करते हुए श्री गुरुदेव से प्राप्त दीक्षा द्वारा भगवान् से विशेष सम्बन्ध स्थापित करना चाहते हैं, उन्हें दीक्षा–अनुष्ठान के पश्चात् ही अर्चन करना चाहिए। सभी मन्त्र भगवन्नामात्मक ही होते हैं। विशेषत: वे नम: आदि शब्दों के द्वारा अलंकृत हैं। भगवान् तथा ऋषियों द्वारा समर्पित (संचरित) विशेष शक्ति वाले होने के कारण यह मन्त्र श्रीभगवान् के साथ अपने (जीव के) विशेष सम्बन्ध को उदित कराने वाले होते हैं। इनमें भी केवल भगवान् के नाम ही अन्य निरपेक्ष भाव से परम पुरुषार्थ (भगवद्-प्रेम) तक को प्रदान करवाते हैं।

अतएव स्पष्ट है कि मन्त्रों की महिमा भगवान् के नामों से अधिक नहीं है तथापि भगवन्नाम ग्रहणकारी व्यक्ति को मन्त्र दीक्षा ग्रहण करने की आवश्यकता होती है, क्यों?

उत्तर :- जबकि स्वरुपत: जीवों को दीक्षा की अपेक्षा नहीं होती तथापि देह सम्बन्ध वशत: सदाचार विहीन व विक्षिप्त मन वाले व्यक्तियों के लिए उनकी उन-उन दुष्प्रवृत्तियों को कम करने के लिए हमारे ऋषियों व महापुरुषों ने अर्चन मार्ग द्वारा किसी-किसी स्थान पर कुछ-कुछ मर्यादाएँ स्थापित की हैं। इनका उल्लंघन करने से पाप लगता है व उक्त पाप से मुक्त होने के लिए शास्त्रों में वर्णित प्रायश्चित भी करना पड़ता है। इसीलिए मन्त्रों से, हरिनाम की महिमा अधिक होने पर भी हरिनाम ग्रहणकारी को मन्त्रदीक्षा की आवश्यकता होती है।

श्रीचैतन्य महाप्रभु द्वारा उपदेशित पाँच प्रकार के मुख्य भक्ति अंगों में श्रद्धा के साथ श्रीमूर्ति की सेवा भी एक अंग है। श्रीमद्भागवत में वर्णित नवधा भक्ति अंगों के अन्तर्गत 'अर्चन' भक्ति भी एक है। कलियुग में "श्रीहरिनाम संकीर्तन" युगधर्म होने पर भी इसमें अन्यान्य भक्ति अंगों का साधन निषिद्ध नहीं है। श्री जीव गोस्वामी, भक्ति सन्दर्भ ग्रन्थ में इसी सन्देह को दूर करने के लिए लिखते हैं कि यदि कलिकाल में कीर्तन भक्ति के अतिरिक्त अन्यान्य भक्ति साधनों का अनुष्ठान करना हो तो उन्हें भी कीर्तन भक्ति के सहयोग से ही करना चाहिए।

"यद्यप्यन्या भक्तिः कलौ कर्तव्या,
तदा कीर्तनाख्य - भक्ति -संयोगेनैव" ।

निष्कपटता पूर्वक तुच्छ भोगवासनाओं का परित्याग कर उच्च स्वर से भगवान् के पवित्र नामों का कीर्तन करना चाहिए । ऐसा करने से आपका मलिन चित्त निर्मल हो जाएगा तथा आपके लिए भगवान् की कृपा प्राप्ति का मार्ग भी प्रशस्त हो जाएगा ।

- (श्रील भक्ति दयित माधव गोस्वामी महाराज)

श्रीविग्रह तत्त्व

सनातनधर्मावलम्बी लोग श्रीविग्रह की सेवा करते हैं। वे पुतला-पूजक (खिलौना पूजक) नहीं हैं। सर्वशक्तिमान भगवान् भक्त की इच्छा पूर्ति के लिए किसी भी स्थान में, किसी भी समय में तथा किसी भी मूर्ति में सर्वशक्ति लेकर प्रकट हो सकते हैं। भगवान के असंख्य अवतारों में से छ: प्रकार के अवतार मुख्य हैं - युगावतार, लीलावतार, पुरुषावतार, मन्वन्तरावतार, गुणावतार एवं शक्त्यावेशावतार। इनके अतिरिक्त भगवान् का एक और विशेष करुणामय अवतार भी होता है जिसे अर्चावतार कहते हैं।

मनुष्य कर्ता बनकर अपनी कल्पना द्वारा जिसे तैयार करते हैं, वह पुतला कहलाता है। परन्तु सर्वशक्तिमान भगवान् भक्तों को दर्शन व सेवा प्रदान करने के लिए गुरु, वैष्णव, पुरोहित व भास्कर[4] को सेवा-सुयोग प्रदान करते हुए उन्हें अवलम्बन कर जब आविर्भूत होते हैं तब भगवान् के इस अर्चावतार को 'श्री विग्रह' कहते हैं।

"प्रतिमा नह तुमि साक्षात् ब्रजेन्द्र नन्दन"
(श्री चैतन्य महाप्रभु जी की वाणी)

अर्थात आप प्रतिमा नहीं हो, आप साक्षात् ब्रजेन्द्रनन्दन श्रीकृष्ण हो। भक्त लोग इस अनुभूति को ग्रहण कर श्रीविग्रह की आराधना करते हैं।

श्रीमद् भागवत् में निम्न आठ प्रकार की प्रतिमाओं का वर्णन पाया जाता है :-

---

4 भास्कर - मूर्ति बनाने वाला

शैली, दारुमयी, लौही, लेप्या, लेख्या च सैकती ।
मनोमयी, मणिमयी, प्रतिमाष्टविधा स्मृता ॥
(भा. 11- 27 -2)

(1) शैली - पत्थर की बनी
(2) दारुमयी - लकड़ी की बनी
(3) लौही - धातु की बनी
(4) लेप्या - मिट्टी तथा चन्दनादि की बनी हुई
(5) लेख्या - चित्रमयी
(6) सैकती - बालुकामयी
(7) मनोमयी - मानसिक चिन्तन द्वारा बनी मूर्ति
(8) मणिमयी - मणियों द्वारा निर्मित

शास्त्रों में कहते हैं कि भगवान् के श्रीविग्रह में 'पत्थर बुद्धि' करना एक भयंकर अपराध है । जो मनुष्य इस प्रकार का अपराध करते हैं, उन्हें नरक की यातनाओं में धकेल दिया जाता है।

प्रमाण :- अर्च्ये विष्णौ शिलाधीर्गुरुषु नरमतिर्वैष्णवे
जातिबुद्धिर्विष्णोर्वा वैष्णवानाम् कलिमलमथने पादतीर्थेऽम्बुबुद्धिः।
श्री विष्णोर्नाम्नि मन्त्रे सकल कलुषहे शब्द सामान्यबुद्धिर्विष्णो
सर्वेश्वरेशे तदितर समधीर्यस्य वा नारकी सः ॥ (पद्म पुराण)

अर्थात जो व्यक्ति अर्चाविग्रह में पत्थर बुद्धि, गुरु में (शुद्ध भक्त गुरु में) मनुष्य बुद्धि, वैष्णवों में जाति बुद्धि, कलिकल्मषनाशक श्रीविष्णु तथा वैष्णवों के पादोदक (चरणामृत) में साधारण जल बुद्धि, सब अमंगलों को नाश करने वाले श्रीविष्णु के नाम तथा मन्त्र में सामान्य शब्द बुद्धि एवं जो परमेश्वर विष्णु तथा अन्य-अन्य देवताओं में समान बुद्धि करते हैं, ऐसे व्यक्ति नारकी होते हैं अर्थात् ऐसे व्यक्तियों की अन्तिम गति नरक ही होती है।

श्री चैतन्य मठ - श्री गौड़ीय मठ - श्री चैतन्य गौड़ीय मठ में विग्रह - सेवा प्रकाश

गृहस्थ लोगों के लिए श्रीविग्रह का अर्चन अत्यन्त आवश्यक है। किन्तु कलियुग के प्रभाव के कारण लोगों में श्रीविग्रह - पूजा के प्रति आग्रह नहीं रहा। आजकल पूजा करने वालों में सदाचार भी नहीं देखा जाता तथा अधिकतर लोग पूजा की विधि के विषय में भी अनभिज्ञ हैं। दूसरी ओर त्यागी लोगों के लिए विग्रह- अर्चन जरूरी नहीं है तथापि मठ-समूह, श्रीमन् महाप्रभु की प्रेम-भक्ति की वाणी के प्रचार-केन्द्र होने के कारण, वहाँ के आश्रित साधकों के कल्याण के लिए मठ में भी श्रीविग्रह सेवा की आवश्यकता अनुभव हुई। इसीलिए, श्रील प्रभुपाद तथा उनके अनुगत आचार्य गणों ने शुद्ध-आचार सम्मत विग्रह सेवा करने का प्रशिक्षण देने के लिए मठ समूहों में त्यागी लोगों के द्वारा विग्रह सेवा का प्रवर्तन किया।

अधिकार - निर्णय

शुद्ध वैष्णवों से विष्णु मन्त्र में दीक्षित व्यक्ति ही विष्णु पूजा के अधिकारी हैं ।

प्रमाण :- यथा कान्चनतां याति कांस्यं रस विधानत : ।
तथा दीक्षाविधानेन द्विजत्वं जायते नृणाम् ॥
(तत्त्वसागर)

अर्थात, जिस प्रकार रसायनिक क्रिया से कांसा सोना बन जाता है, उसी प्रकार दीक्षा प्राप्त मनुष्य मात्र ही, चाहे वह जिस किसी वर्ण का व्यक्ति क्यों न हो, 'द्विजत्व' को प्राप्त होता है । श्री सनातन गोस्वामी ने भी ऊपर लिखे श्लोक की टीका में लिखा है कि इस श्लोक में "नृणाम्" शब्द से समस्त दीक्षित मनुष्यों को तथा "द्विजत्त्वां" शब्द से विप्रता अर्थात 'ब्राह्मणता' को इंगित किया गया है ।

सद्गुरु (शुद्धभक्त) द्वारा दीक्षित एवं भक्ति सदाचार युक्त किसी भी वर्ण का व्यक्ति वैष्णव हो जाने पर श्रीविग्रह - अर्चन का अधिकारी हो जाता है । जहाँ शुद्ध वैष्णवता है, वहाँ ब्राह्मणता तो होगी ही। ब्राह्मण सत्वगुण प्रधान होता है, किन्तु वैष्णवता निर्गुण अर्थात माया से अतीत होती है।

शुद्ध वैष्णव से विष्णु मन्त्र में दीक्षित तथा शुद्ध भक्ति - सदाचार में सम्पन्न स्त्री भी न केवल श्रीविग्रह के अर्चन की अपितु श्री शालग्राम - शिला पूजा की भी अधिकारी हो जाती है । जैसा कि स्कन्द पुराण में भी लिखा है-

एवं श्रीभगवान् सर्वे: शालग्रामशिलात्मक:

द्विजे स्त्रीभिश्च शूद्रैश्च भगवत: परे: ॥
ब्राह्मण-क्षत्रिय-विशां सच्छूद्राणामथापि वा ।
शालग्रामेषऽधिकारोऽस्ति न चान्येषां कदाचन ॥
(स्कन्द पुराण)

अतएव शास्त्रों के नियमानुसार दीक्षा ग्रहणपूर्वक ब्राह्मण, स्त्री, शूद्र सभी शालग्राम-शिला रूपी श्रीभगवान् की पूजा कर सकते हैं। ब्राह्मण-क्षत्रिय-वैश्य इन सभी का श्रीशालीग्राम की सेवा में अधिकार है। 'शूद्र' के 'सत्-शूद्र' होने पर ही उसका सेवा में अधिकार है, अन्यों का कोई अधिकार नहीं है । सत्-शूद्र, शब्द का अर्थ है-विष्णुभक्ति परायण शूद्र | अन्य सभी का अर्थात् जो विष्णु भक्त नहीं हैं, उनका शालग्राम शिला की पूजा में अधिकार नहीं है।

अर्चन और भजन

सम्भ्रम-बोध सहित, शास्त्र द्वारा प्रदर्शित मार्ग के अनुसार, विविध उपचारों द्वारा श्रीविग्रह की सेवा को 'अर्चन' कहा जाता है। कनिष्ठ-अधिकार में 'अर्चन' एवं उन्नत-अधिकार के समय "भजन' होता है। स्थूल एवं सूक्ष्म (दोनों) उपाधियों से मुक्त होकर - अपने स्वरूप में अवस्थित व्यक्ति ही 'अधोक्षज' (इन्द्रियों से अतीत) श्रीभगवान् की साक्षात् सेवा में स्थित रह सकता है; यही शुद्ध और चिन्मय सेवा है, इसी को 'भजन' भी कहते हैं । स्थूल व सूक्ष्म दोनों प्रकार के शरीरों में आसक्त निम्न अधिकारी व्यक्ति के लिए भजन सम्भव नहीं है, उनके लिए शास्त्रों में अर्चन करने का ही उपदेश है, शुद्ध भक्ति मार्ग में कनिष्ठाधिकार में अर्चन करने का विधान है ।

श्रीमद्भागवत् के सातवें स्कन्ध के पाँचवें अध्याय के 24वें श्लोक की व्याख्या करते हुए श्रील भक्ति सिद्धान्त सरस्वती गोस्वामी प्रभुपाद ने गृहस्थ लोगों के लिए 'अर्चन' को अत्यावश्यक बतलाया है। इस प्रसंग में उन्होंने इस प्रकार लिखा है कि जो गृहस्थ लोग सम्पतिशाली हैं, उनके लिए अर्चन-मार्ग ही मुख्य रूप से करणीय है। यदि वे गृहस्थ लोग अर्चन न करके, निष्किंचन परमहंस भक्तों की भाँति एकमात्र स्मरण आदि विधियों में ही आसक्त रहेंगे, तो उन्हें शास्त्र विधि के अनुसार 'वित्तशाठ्य-दोष' लगता है। श्रील प्रभुपाद ने लिखा है कि दूसरों के द्वारा अर्थात वेतन भोगी पुजारी द्वारा श्रीमूर्ति की सेवा कराना अच्छा नहीं है, कारण ऐसा करना एक तो अपनी विषयासक्ति अथवा आलस्यता का परिचय देना है; दूसरा शुद्ध भाव विहीन एवं अश्रद्धायुक्त अर्चन को महाजनों ने निकृष्ट बतलाया है।

अर्चन-पूजा के लिए आवश्यक वस्तुओं को संग्रह करना एकमात्र गृहस्थियों के लिए ही आसान है। अत: उनके लिए

कृष्णानुशीलन कार्य में "नवधा भक्ति" के अन्तर्गत अर्चन-मार्ग का ही मुख्य विधान है। अतएव अर्चन न करने से गृहस्थ लोगों को निश्चित रूप से महान दोष लगता है । यहाँ तक कि अर्चन न करने से दीक्षित व्यक्तियों का नरक पतन भी सुना जाता है ।

शास्त्रीय मतानुसार, अर्चन दो प्रकार का होता है:-

(1) शुद्ध अर्चन

(2) कर्म मिश्रित अर्चन

जो लोग निष्काम हैं तथा जिनकी भगवान में सुदृढ़ श्रद्धा है, उन लोगों के लिए शुद्ध अर्चन ही करणीय है तथा व्यवहारिक (सांसारिक कार्यों में व्यस्त) और मन्मुखी (जिनका मन अभी पूरी तरह वश में नहीं है या अपनी इच्छाओं के अधीन है) व्यक्तियों के लिए कर्ममिश्र अर्चन विहित है ।

"श्रीअर्चन-पद्धति" में इस प्रकार लिखा है कि अर्चन में नाना प्रकार के उपकरण अथवा अनुष्ठानों के प्रयोजन का विधान होते हुए भी श्रीभगवत् मन्त्र का ही प्राधान्य है। इसके अतिरिक्त अन्यान्य मन्त्रों में भी उपास्य भगवान् का नाम ही मुख्य वस्तु है। वास्तव में श्रीहरिनाम के द्वारा ही श्रीविग्रह की पूजा होती है। इसीलिए श्रीभगवान् का नाम-कीर्तन ही अर्चन का मुख्य अंग व प्राण है । अर्चन में भी कीर्तनाख्य (कीर्तन के द्वारा) भक्ति का ही प्रभुत्त्व है।

"वस्तुत: कलिकाल में कीर्तनाख्या भक्ति के सहयोग के बिना अन्य किसी भी भक्ति अंग का अनुष्ठान उचित नहीं है। अन्य सब प्रकार की शास्त्रोक्त पूजाओं की अपेक्षा श्रीनाम संकीर्तन ही सर्वश्रेष्ठ पूजा है।"

सेवापराध - विचार

हरिनाम भजन में जिस प्रकार अपराधों का विचार होता है, उसी प्रकार आगम (शास्त्रों) में श्रीविग्रह-अर्चन के विषय में 32 प्रकार के सेवापराधों एवं वराह पुराण में भी अनेक प्रकार के सेवापराधों की बातें उल्लिखित हैं। ठीक प्रकार से श्रीविग्रह-अर्चन करने के लिए सब प्रकार के अपराधों से मुक्त होना होगा ।

विष्णु-अर्चन मार्ग में ये 32 प्रकार के अपराध हैं।

सेवापराध - समूह

1. सवारी पर बैठकर या जूते-चप्पल पहनकर मंदिर में प्रवेश करना।
2. भगवान के प्रमुख उत्सवों (जैसे जन्माष्टमी, डोल यात्रा) को न मनाना।
3. श्रीभगवद्विग्रह के सामने प्रणाम न करना।
4. अशुद्ध अवस्था (उच्छिष्ट या अशौच) में वंदना या सेवा करना।
5. एक हाथ से प्रणाम करना।
6. श्रीभगवद्विग्रह की ओर पीठ करके बैठना।
7. श्रीभगवद्विग्रह के सम्मुख पैर फैलाकर बैठना।
8. घुटनों को हाथों से बाँधकर बैठना।
9. भगवान के सामने सोना या लेटना।
10. श्रीभगवद्विग्रह के सामने भोजन करना।
11. भगवान के सामने जोर से बोलना या चिल्लाना।
12. श्रीभगवद्विग्रह के सामने झूठ बोलना।
13. श्रीभगवद्विग्रह के सामने व्यर्थ की सांसारिक चर्चा करना।
14. श्रीभगवद्विग्रह के सामने रोना (सांसारिक दुखों के कारण)।

15. श्रीभगवद्विग्रह के सामने आपसी कलह या झगड़ा करना।
16. श्रीभगवद्विग्रह के सामने किसी को प्रताड़ित करना या पीटना।
17. श्रीभगवद्विग्रह के सामने किसी पर अनुग्रह (आशीर्वाद) करना या किसी को दंड देना।
18. श्रीभगवद्विग्रह के सामने कठोर या कड़वे वचन बोलना।
19. कम्बल ओढ़कर (आलस्य या अनादर पूर्वक) सेवा करना।
20. श्रीभगवद्विग्रह के सामने दूसरों की निंदा करना।
21. श्रीभगवद्विग्रह के सामने किसी साधारण मनुष्य की स्तुति (प्रशंसा) करना।
22. श्रीभगवद्विग्रह के सामने अश्लील या अभद्र भाषा का प्रयोग।
23. श्रीभगवद्विग्रह के सम्मुख अधोवायु (Gas) त्याग करना।
24. सामर्थ्य होते हुए भी घटिया सामग्री से पूजा करना (वित्तशाठ्य)।
25. भगवान को भोग लगाए बिना स्वयं भोजन करना।
26. मौसम के नए फल या अनाज सबसे पहले भगवान को अर्पित न करना।
27. बचा हुआ या किसी को देने के बाद शेष बचा हिस्सा (अग्रभाग के बिना) भोग लगाना।
28. मौन रहकर सेवा न करना (जहाँ बोलना वर्जित हो)।
29. भगवान के सम्मुख किसी दूसरे (मनुष्य) को प्रणाम करना।
30. गुरु की उपस्थिति में उनकी आज्ञा के बिना स्तवन या पूजा करना।
31. गुरु के सामने अपनी प्रशंसा स्वयं करना।
32. अन्य देवी-देवताओं की निंदा करना।

वाराह पुराण में अन्यान्य जो अपराध बतलाये गये हैं, वे भी संक्षेप में लिखे जा रहे हैं ।

1. राजान्न भक्षण करना।
2. अन्धकार में भगवान् के श्रीविग्रह को स्पर्श करना।

3. शास्त्र विधि को छोड़कर भगवद्-विग्रह का अर्चन करना।
4. शयन के बाद भगवान् को जगाने के लिए चुपचाप (वाद्य रहित होकर) मन्दिर का दरवाज़ा खोलना।
5. कुत्ते आदि की दृष्टि में पड़ा नैवेद्य भोग लगाना।
6. पूजा के समय बातचीत करना।
7. पूजा के समय मल त्यागने जाना।
8. गन्ध-माल्यादि न देकर धूप देना।
9. निषिद्ध पुष्पों द्वारा पूजा करना।
10. दन्त-मंजन किए बिना भगवद् विग्रह का स्पर्श या सेवा करना।
11. स्त्री-सम्भोग के पश्चात् भगवद् विग्रह का स्पर्श या सेवा करना।
12. रज:स्वला (कामुक) स्त्री को स्पर्श करके श्रीभगवद्विग्रह का स्पर्श या सेवा करना।
13. अपरिचित व्यक्ति को स्पर्श करके श्रीभगवद्विग्रह का स्पर्श या सेवा करना।
14. शव को स्पर्श करके श्रीभगवद्विग्रह का स्पर्श या सेवा करना।
15. लाल कपड़े पहन कर श्रीभगवद्विग्रह की सेवा करना।
16. नीले कपड़े पहन कर श्रीभगवद्विग्रह की सेवा करना।
17. बिना धुले वस्त्र पहन कर श्रीभगवद्विग्रह की सेवा करना।
18. गन्दे कपड़े पहन कर श्रीभगवद्विग्रह की सेवा करना।
19. दूसरों के कपड़े पहनकर श्रीभगवद्विग्रह की सेवा करना।
20. शव का दर्शन करने के पश्चात् श्रीभगवद्विग्रह की सेवा करना।
21. श्मशान में जाने के पश्चात् स्नान आदि किए बिना श्रीभगवद्विग्रह की सेवा करना।
22. श्रीभगवद्विग्रह सेवा करते समय क्रोध प्रकाशित करना।
23. अपान-वायु परित्याग करके श्रीभगवद्विग्रह की सेवा करना।
24. भोजन करने के एकदम पश्चात् अर्थात खाये हुए भोजन की अजीर्ण अवस्था में श्रीभगवद्विग्रह की सेवा करना।

25. कुसुम्भ (उत्तेजक पदार्थ) खाकर श्रीभगवद्विग्रह की सेवा करना।
26. हींग खाकर श्रीभगवद्विग्रह की सेवा करना।
27. शरीर में तेल-मालिश के पश्चात् श्रीहरि के श्रीभगवद्विग्रह को स्पर्श करने या उनके ही किसी अर्चन का कार्य करने से पाप लगता है।

दस प्रकार के नामापराध :-

1. साधुनिन्दा।
2. शिवादि देववृन्द में श्रीकृष्ण से पृथक ईश्वर बुद्धि रखना।
3. गुरु-अवज्ञा।
4. श्रुति-शास्त्र निन्दा।
5. नाम में अर्थवाद।
6. नाम के बल पर पाप करना।
7. श्रद्धाहीन व्यक्ति को नाम उपदेश करना।
8. अन्य शुभ कार्यों के साथ नाम की बराबरी(तुलना) करना।
9. प्रमाद अर्थात् ध्यान कहीं ओर देकर नाम लेना।
10. नाम की महिमा श्रवण करने के पश्चात् भी 'मैं" और "मेरी" रूप देहात्मबुद्धि से युक्त होकर हरिनाम में प्रीति या अनुराग न करना।

श्रीविष्णु का पञ्चाङ्ग - अर्चन

अभिगमन, उपादान, योग, स्वाध्याय तथा इज्या : अर्चन के पाँच अंग कहलाते हैं।

1. **अभिगमन** – अभिगमन का अर्थ होता है - सेवा अर्थात् श्रीमन्दिर मार्जन करना, उपलेपन, निर्माल्य दूर करना इत्यादि।

2. **उपादान** – गन्ध, पुष्प, तुलसी इत्यादि, श्रीविग्रह सेवा के उपकरणों को इकट्ठा करना।

3. **योग** – भूत-शुद्धि - जड़ीय देह, मन के अतीत शुद्ध चिन्मय स्वरूप की चिन्ता करना अर्थात् मैं गोपीभर्ता - श्रीकृष्ण के दासों का दास हूँ। इस प्रकार की भावना उत्पन्न करना।

4. **स्वाध्याय** – साधारण अर्थ वेदाध्ययन, किन्तु यहाँ पर स्वाध्याय का अर्थ श्रीमद् भागवत, श्री चैतन्य चरितामृत तथा शुद्ध भक्ति के अनुकूल शास्त्रादि की आलोचना या अनुशीलन करने से है। हरिनाम मन्त्र का चिन्तन पूर्वक जप व कीर्तन करना, सूक्त-स्तोत्रादि पाठ करना व श्रीकृष्ण संकीर्तन करना - ये सभी क्रियाएँ स्वाध्याय के अन्तर्गत आती हैं।

5. **इज्या** – पूजा अर्थात् अपने उपास्य देवता की नाना प्रकार की सेवा करना।

श्रीविष्णु के अर्चन में या यज्ञ में, ब्रह्ममुहूर्त में, भगवान् के

जागरण के समय तथा मंगल-वन्दनादि से लेकर रात को शयन पुष्पान्जलि तक सभी सेवा कार्य उपरोक्त पाँचों अंगों द्वारा निर्दिष्ट कर दिये गए हैं। पञ्चाङ्ग-अर्चन ही नित्य विशुद्ध अर्चन है । यह स्मार्त लोगों के जड़-कर्मो की भाँति अनित्य नहीं है।

अरुणोदयकाल – सूर्य उदय होने से 4 दण्ड (1 घंटा 36 मिनट) पूर्व से लेकर सूर्य उदय तक के समयान्तराल को 'अरुणोदय काल' कहते हैं।

ब्रह्ममुहूर्त – अरुणोदय काल के प्रथम दो दण्ड (48 मिनट) के समय को ब्रह्ममुहूर्त कहते हैं ।

अर्चन के प्रारम्भिक नित्य कृत्य-1

श्रीविग्रह के अर्चन के समय, सन्ध्या एवं आह्निक करते समय व श्रीमद् भागवत के पाठ आदि भगवद्-उपासनाओं से पूर्व श्री श्रीगुरु-गौरांग की जय गान करनी चाहिए। श्री गुरु-गौरांग की कृपा छोड़ कर जीव को उनकी सेवा का अधिकार प्राप्त नहीं होता। 'जय' शब्द का अर्थ होता है - श्री गुरु-वैष्णव-भगवान् हमें जय कर लें। इसीलिए ब्राह्ममुहूर्त में बिस्तर छोड़ने के पश्चात् तथा उपासनादि से पूर्व श्रीगुरु-वैष्णव व भगवान् का जय गान करना भक्ति का विशेष अंग है। जय गान करने के पश्चात् पञ्चतत्त्व तथा महामन्त्र का कीर्तन करना चाहिए। श्री गुरु-वैष्णव भगवान् का जय गान क्रमानुसार एक के बाद एक किस प्रकार करना चाहिए, वह नीचे वर्णित है।

जय श्री श्री गुरु गौरांग-गान्धर्विका गिरधारी की जय ।

जय श्री श्री गुरु-गौरांग-गान्धर्विका-गिरिधारी-राधामदन मोहन-पञ्चतत्वात्मक श्रीगौर हरि की जय ।

जय श्री चैतन्य गौड़ीय मठ के प्रतिष्ठाता नित्यलीला प्रविष्ट ॐ विष्णुपाद 108 श्री श्रीमद् भक्ति बल्लभ तीर्थ गोस्वामी महाराज की जय ।

जय श्री चैतन्य गौड़ीय मठ के प्रतिष्ठाता नित्यलीला प्रविष्ट ॐ विष्णुपाद 108 श्री श्रील भक्ति दयित माधव गोस्वामी महाराज की जय ।

जय श्री चैतन्य मठ एवं श्री गौड़ीय मठ समूह के प्रतिष्ठाता नित्यलीला प्रविष्ट ॐ विष्णुपाद 108 श्री श्रीमद् भक्ति सिद्धान्त सरस्वती गोस्वामी ठाकुर की जय ।

जय परमहंस बाबाजी श्री श्रील गौरकिशोर दास गोस्वामी महाराज की जय ।

जय श्री श्रील सच्चिदानन्द भक्ति विनोद ठाकुर की जय।

जय वैष्णवसार्वभौम श्री श्रील जगन्नाथदास बाबाजी महाराज की जय ।

जय श्री श्रील बलदेव विद्याभूषण प्रभु की जय ।

जय श्री श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुर की जय ।

जय श्री श्रील नरोत्तम ठाकुर महाशय की जय ।

जय श्री श्रील श्यामानन्द प्रभु की जय ।

जय श्री श्रील श्रीनिवासाचार्य प्रभु की जय ।

जय श्री श्रील कृष्णदास कविराज गोस्वामी प्रभु की जय ।

जय श्री श्रील वृन्दावन दास ठाकुर महाशय की जय ।

जय श्रीरूप, सनातन, भट्ट रघुनाथ, श्रीजीव, गोपाल भट्ट, दासरघुनाथ षड़गोस्वामी प्रभुकी जय ।

जय श्री श्रील स्वरूप दामोदर प्रभु की जय ।

जय श्रील राय रामानन्द प्रभु की जय ।

जय श्रीकृष्ण चैतन्य प्रभुनित्यानन्द श्रीअद्वैत गदाधर श्रीवासादि गौरभक्त वृन्दकी जय ।

जय सपरिकर श्री श्रीराधामदनमोहन की जय ।

जय सपरिकर श्री श्रीराधागोविन्द की जय ।

जय सपरिकर श्री श्रीराधागोपीनाथ की जय ।

जय अन्तर्द्वीप श्रीधाम मायापुर, सीमन्तद्वीप, गोद्रुमद्वीप, मध्यद्वीप, कोलद्वीप, ऋतुद्वीप, जह्नुद्वीप, मोदद्रुमद्वीप, रुद्रद्वीपात्मक श्रीनवद्वीपधाम की जय ।

जय श्रीपुरुषोत्तम धाम की जय ।

जय श्रीबलदेव, श्रीसुभद्रा, श्रीजगन्नाथ देव की जय ।

जय श्रील प्रभुपाद के आविर्भाव पीठ की जय ।

जय द्वादशवन-यमुना-मथुरा-वृन्दावन-गोवर्द्धन-राधाकुण्ड श्यामकुण्डात्मक श्री ब्रजमण्डल की जय ।

जय सर्व-विघ्नविनाशनकारी श्री नृसिंह देव की जय ।

जय श्री प्रह्लाद महाराज की जय ।

जय श्री क्षेत्रपाल शिव की जय ।

जय श्री विश्ववैष्णव राज सभा की जय ।

जय चारों धाम की जय ।

जय चारों वैष्णव सम्प्रदायों की जय ।

जय श्रीमध्व, श्रीरामानुज, श्रीविष्णुस्वामी, श्रीनिम्बादित्य चारों वैष्णव आचार्यों की जय ।

जय आकर मठराज श्री चैतन्य मठ एवं अन्य शाखा मठ समूह की जय ।

जय श्रीधाम मायापुर ईशोद्यान स्थित मूल श्री चैतन्य गौड़ीय मठ एवं अन्यान्य शाखा मठ समूह की जय ।

जय श्रीहरिनाम संकीर्तन की जय ।

अर्चन के प्रारम्भिक नित्य कृत्य-2

प्रस्तुत शीर्षक के इस भाग में भक्ति साधकों व साधारण लोगों के लिए नित्य करणीय विषयों - जैसे दन्त धावन, तिलक सरंचना व स्नानादि करने की शास्त्र-अनुमोदित विधियाँ बताई जा रही हैं जो कि अर्चनकारी भक्ति साधकों के लिए अवश्य पालनीय हैं।

दन्त धावन करने की विधियाँ

भक्ति साधकों को चाहिए कि वे शयनासन छोड़ने के पश्चात् दोनों आँखों को धोकर, पवित्र एवं स्थिर चित्त से दन्त धावन करें।

दन्त धावन के सम्बन्ध में श्रीव्यासदेव ने कहा है कि प्रतिपदा, अमावस्या, षष्ठी व नवमी तिथि एवं रविवार को पत्तों से दाँत माँजने चाहिए, किन्तु अन्य दिनों में लकड़ी से दाँत माँजने चाहिए तथा प्रतिदिन लकड़ी से जीह्वा अवश्य स्वच्छ करनी चाहिए। श्रीव्यासदेव ने यह भी लिखा है कि जिन-जिन तिथियों में दन्त-मंजन करना निषेध है उन तिथियों को पवित्र जल से बारह बार कुल्ला करना चाहिए। स्मृति शास्त्र में इस प्रकार लिखा है कि काँटे वाले वृक्ष की लकड़ी से दाँत माँजना पवित्र होता है तथा दूध वाले वृक्ष की लकड़ी से दाँत माँजने से आयु बढ़ती है। कड़वे, तिक्त, कषाय व रस वाले वृक्ष की लकड़ी से दाँत माँजने से बल में वृद्धि, रोगों से छुटकारा तथा सुख प्राप्त होता है। पुजारी व्रत वाले दिन भी दाँत स्वच्छ करेंगे। दक्षिण देशवासी वैष्णव भक्त व्रत के दिन पत्ते आदि के द्वारा दाँत स्वच्छ करते हैं।

मलमूत्र त्याग एवं शौच्य विधि :

विष्णु पुराण में इस प्रकार लिखा है कि बुद्धिमान व्यक्ति को (विपत्तिकाल को छोड़कर) दिन में उत्तर की ओर मुख करके व रात में पूर्व की ओर मुख करके घास से ढके भूतल पर मल इत्यादि त्याग करना चाहिए तथा उक्त स्थान पर अधिक समय नहीं बैठना चाहिए । मलमूत्र त्याग करते समय सिर कपड़े से ढका होना चाहिए तथा मुख से कुछ भी उच्चारण नहीं करना चाहिए। द्विजों को चाहिए कि वे उक्त समय यज्ञोपवीत को अपने दायें कान के ऊपर रख लें। मूत्र करने के पश्चात पानी अवश्य व्यवहार में लाना चाहिए। इसके अतिरिक्त खोदी हुई भूमि पर, अनाज के खेत में, गौशाला में, जन समाज में, मार्ग में, पवित्र नदियों में, पानी के बीच में, पानी की धारा में, श्मशान में, अपनी छाया पर, पेड़ की छाया में तथा गाय, सूर्य, अग्नि, वायु, गुरु तथा ब्राह्मण की ओर मुख करके कभी भी मलमूत्र का त्याग न करें। मलत्याग करने के पश्चात् मिट्टी और जल द्वारा शौच विधि का अवश्य पालन करना चाहिए।

स्नान के विधान व प्रकार :

हरिभक्ति विलास नामक ग्रन्थ में इस प्रकार विधान दिया गया है कि ब्रह्मचारी एक बार (यदि सम्भव हो सके तो अरुणोदय के समय) स्नान करेंगे। गृहस्थ एवं वानप्रस्थ - दो बार अरुणोदय के समय व दोपहर में तथा सन्यासी तीन बार (अरुणोदय, दोपहर तथा साँयकाल में) स्नान करेंगे। अरुणोदय के समय स्नान करना त्रिसन्ध्या स्नान से अधिक सर्वोत्तम है। ऊपर लिखी व्यवस्था के अनुसार यह बात नहीं है कि रोगग्रस्त व्यक्ति को भी स्नान करके और अधिक रोगी होना पड़ेगा।

शास्त्रों में असमर्थ लोगों के लिए मन्त्र स्नान आदि की भी

व्यवस्था दी गयी है। यदि कहीं जल का अभाव हो तो एक बार स्नान करने से भी चलेगा। श्रीहरिभक्तिविलास में स्मृति के प्रमाणों का उल्लेख करके सात प्रकार के स्नानों का वर्णन है :-

(1) वारुण-स्नान अर्थात् नदी आदि के प्रवाह में स्नान।

(2) मन्त्र स्नान अर्थात् स्मार्त लोगों के "शन्न आप:" इत्यादि मन्त्र एवं वैष्णव लोगों के मूल-मन्त्र आदि उच्चारण पूर्वक स्नान।

(3) पार्थिव स्नान - मिट्टी के स्पर्श से स्नान।

(4) आग्नेय स्नान - भस्म लेपन द्वारा स्नान।

(5) वायव्य स्नान - गोधूलि द्वारा स्नान।

(6) दिव्य स्नान - ऐसे समय पर जब धूप भी हो व वर्षा भी हो रही हो, ऐसी वर्षा में स्नान करना।

(7) मानस स्नान - मन-मन में विष्णु भगवान् का ध्यान करने को मानस स्नान कहते हैं।

मानस स्नान ही सभी प्रकार के स्नानों में श्रेष्ठ है । गरुड़ पुराण में नारद जी की उक्ति तथा "विष्णुधर्म' में पुलस्त्य ऋषि जी की उक्ति इस प्रकार है :-

अपवित्र: पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा ।
य: स्मरेत् पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तर: शुचि: ॥

अर्थ :- अपवित्र हो या पवित्र अर्थात् जिस किसी अवस्था में भी पुण्डरीकाक्ष (भगवान् का नाम) को स्मरण करने से भगवन्नाम स्मरणकारी बाहर एवं भीतर-दोनों प्रकार से शुद्ध हो जाते हैं।

शिखा बन्धन: स्नान के पश्चात् गायत्री मन्त्र के साथ-साथ शिखा बन्धन करना कर्तव्य है, उन्मुक्त (खुली) शिखा अवस्था में कोई भी सेवा करना निषेध है। शिखा बन्धन के पश्चात् ही आचमन व पूजा के अन्य-अन्य कार्य करने चाहिए।

वस्त्र: स्नान के पश्चात् पवित्र वस्त्र धारण करने चाहिए।

बिना धुले वस्त्र, धोबी द्वारा धुले वस्त्र, मैले व गीले वस्त्र या मलमूत्र के समय उपयोग किए गए वस्त्रों को श्रीविग्रह के अर्चन के समय धारण करना निषेध है। गृहस्थ व्यक्तियों के लिए रंगीन वस्त्र अथवा कौपीन पहन कर (मात्र कच्छा पहनकर) श्रीविग्रह पूजा करना निषेध है। फटा, जला या सिला हुआ कपड़ा एवं दूसरे व्यक्ति द्वारा उपयोग किया हुआ कपड़ा भी अर्चन के समय धारण करना निषेध है। वस्त्रों के अपवित्र होने पर पानी से धोकर शुद्ध करना चाहिए। ऊनी वस्त्र वायु, सूर्य तथा अग्नि आदि की किरणों द्वारा शुद्ध हो जाते हैं। भेड़ के बालों से बने वस्त्र एवं कम्बल प्रत्येक अवस्था में शुद्ध माने जाते हैं। किन्तु इन वस्त्रों को धारण करके श्रीविग्रह का अर्चन करना उचित नहीं है क्योंकि उससे वस्त्र के लोम (बाल) झड़कर सेवा में विघ्न उत्पन्न कर सकते हैं।

अर्चन के प्रारम्भिक नित्य कृत्य-3

श्री भगवद-विग्रह अर्चनकारी व्यक्ति को चाहिए कि वह प्रातःकाल बिस्तर छोड़ने के बाद दन्त धावन करे । तत्पश्चात् हाथ-पैर धोए, उसके बाद यथारीति स्नान करे व रात को सोते समय व्यवहार किए गए कपड़ों को परित्याग करके धोए हुए पवित्र वस्त्र पहने। उसके बाद सन्ध्या वन्दनादि करे। सन्ध्या व आह्निक करने के लिए अलग से एक आसन होना चाहिए । उस आसन पर दिन में पूर्व की ओर व रात में उत्तर की ओर मुख करके सन्ध्या-पूजा करनी चाहिए। दिन में उत्तर की ओर व रात में पूर्व की ओर मुख करके भी पूजा कर सकते हैं तथापि दिन में पूर्व की ओर व रात में उत्तर की ओर सन्ध्या, पूजा इत्यादि करना अच्छा है।

पवित्र तीर्थ के जल को छोड़कर किसी भी जल से सन्ध्या या आचमन करना उचित नहीं है, हाँ, यदि तीर्थ जल न मिलता हो तो ऐसे समय पर पूजक को चाहिए कि वह पंचपात्र में रखे जल को मन्त्रों द्वारा पवित्र कर ले।

जल पवित्र करने की विधि :

अपने दाहिने हाथ को उल्टा करके अर्थात हथेली को मुँह की ओर रखकर मध्यमा अंगुली के पिछले हिस्से को जल में स्पर्श करते हुए समस्त तीर्थों का नीचे लिखे मन्त्र द्वारा आवाहन करें - जैसा कि चित्र में दिखाया गया है :-

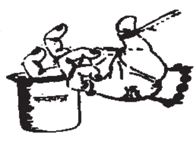

जल पवित्र करने हेतु मन्त्र :

गंगे च यमुने चैव गोदावरी सरस्वती ।
नर्मदे सिन्धो कावेरी जलेऽस्मिन सन्निधिं कुरु ॥

पूजक को इस बात का हमेशा ध्यान रखना चाहिए कि पंचपात्र के जल में नाखुनों का स्पर्श न हो, क्योंकि नाखुनों के द्वारा स्पर्शित जल को अपवित्र माना जाता है जो कि पूजा इत्यादि शुभ कार्यों में नहीं लगता।

मन्त्र पढ़ने के बाद बायें हाथ की हथेली में उसी जल में से थोड़ा सा जल लेकर उसमें गोपीचन्दन, उसके अभाव में तुलसी की मिट्टी घिसकर उससे केशवादि द्वादश मन्त्र से ललाटादि द्वादश अंगों में ऊर्ध्वपुण्ड्र (तिलक) या हरिमन्दिर की रचना करनी चाहिए।

ऊर्ध्वपुन्ड्र या हरिमन्दिर (तिलक) बनाने का तरीका

यच्छरीरं मनुष्याणामूर्ध्वपुन्ड्रं बिना कृतम् ।
दृष्टव्यं नैव तत्तावत् श्मशान सदृशं भवेत् ॥
(पद्मपुराण)

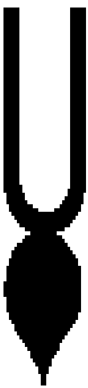

अर्थात् "बिना ऊर्ध्वपुण्ड्र वाले मानव शरीर का दर्शन नहीं करना चाहिए क्योंकि वह श्मशान के समान होता है" टेढ़ा ऊर्ध्वपुण्ड्र धारण नहीं करना चाहिए। वैष्णव लोग ऊर्ध्वपुण्ड्र की जगह त्रिपुण्ड्र न करें। वक्ष:स्थल आदि पर पीपल के पत्ते की तरह, बांस के पत्ते की तरह व कमल के फूल की कर्णिका की तरह तिलक नहीं करना चाहिए।

जो शीशे में अथवा जल में अपना प्रतिबिम्ब देखकर यत्न के साथ ऊर्ध्वपुण्ड्र निर्माण करते हैं, वे परमागति लाभ करते हैं। दशांगुल प्रमाण का ऊर्ध्वपुण्ड्र अति उत्तम, नवांगुल प्रमाण का मध्यम व अष्टांगुल प्रमाण के ऊर्ध्वपुण्ड्र को निकृष्ट समझा जाता है। नाक के मूल से प्रारम्भ करके ललाट (कपाल) के अन्त तक मिट्टी लगनी चाहिए । नासिका के चार भागों में से तीन भागों को नासिका का मूल कहा जाता है।

तिलक को दोनों भ्रूओं के मूल से प्रारम्भ करके रेखांकित करना चाहिए जैसा कि ऊपर दिए गए चित्र में दिखाया गया है।

पद्मपुराण में कहते हैं कि नासिका से सिर के बालों तक विस्तृत, अतीव सुन्दर और बीच में छेद से युक्त - ऊर्ध्वपुण्ड्र को ही हरिमन्दिर समझना चाहिए। ऊर्ध्वपुण्ड्र के बायीं ओर ब्रह्मा, दक्षिण की ओर सदाशिव और बीच में हरि अधिष्ठित रहते हैं, इसलिए मध्य भाग में लेपन नहीं करना चाहिए।

तन्मन्त्र

ललाटे केशवं ध्यायेन्नारायणमथोदरे ।
वक्षःस्थले माधवं तु, गोविन्दं कण्ठकूपके ॥
विष्णुं च दक्षिणे कुक्षौ, बाहौ च मधुसूदनम् ।
त्रिविक्रमं कन्धरे तु, वामन वामपार्श्वके ॥।
श्रीधरं वाम बाहौ तु, हृषीकेशन्च कन्धरे ।
पृष्ठे तु पद्मनाभं च कटयां दामोदरं न्यसेत् ।
तत्प्रक्षालनतोयन्तु वासुदेवाय मूर्धनि ।

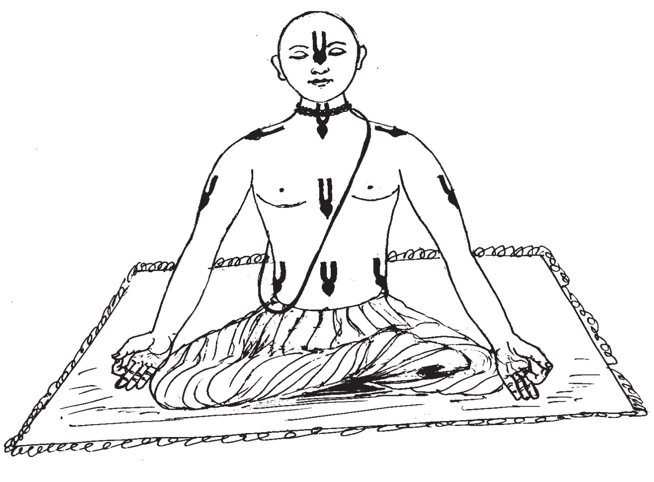

प्रयोग

1. ललाट में	-	श्रीकेशवाय नमः ।
2. उदर में	-	श्रीनारायणाय नमः ।
3. वक्ष:स्थल में	-	श्रीमाधवाय नमः ।
4. कण्ठ में	-	श्रीगोविन्दाय नमः ।
5. दक्षिणकुक्षि में	-	श्रीविष्णवे नमः ।
6. दक्षिणबाहु में	-	श्रीमधुसूदनाय नमः ।
7. दक्षिणस्कन्ध में	-	श्रीत्रिविक्रमाय नमः ।
8. वामकुक्षि में	-	श्रीवामनाय नमः ।
9. वामबाहु में	-	श्रीश्रीधराय नमः ।
10. वामस्कन्ध में	-	श्रीहृषीकेशाय नमः ।
11. पीठ में	-	श्रीपद्मनाभाय नमः ।
12. कटि में	-	श्रीदामोदराय नमः ।

अन्त में बाएँ हाथ में बचे हुए जल को "श्रीवासुदेवाय नमः!" कहकर मस्तक में लगाएँ । तिलक करने के बाद आचमन अवश्य करना चाहिए । आचमन की विधि इस प्रकार है - पहले बायें हाथ से

पंचपात्र की चम्मच को पकड़े, उससे दाहिने हाथ की हथेली में जल डालकर उसे धो लें। इसके बाद:

1 . श्रीकेशवाय नमः ।

2 . श्रीनारायणाय नमः ।

3 . श्रीमाधवाय नमः ।

इन तीन मंत्रों से तीन बार आचमन करें । आचमन के बाद-"**ॐ तद् विष्णोः परमं पदं सदा पश्यन्ति सूरयः। दिवीव चक्षुराततम् ॥**"[5] - इस मन्त्र का पाठ करना चाहिए ।

इसके बाद श्री श्रीगुरु-गौरांग-गान्धर्विका-गिरिधारी और तुलसी को प्रणाम करें । सबसे पहले श्रद्धा के साथ श्रीलगुरुदेव जी के स्मरण के पश्चात् कम से कम पंचतत्त्व का नाम बारह बार कीर्तन करें।

श्रीकृष्णचैतन्य प्रभु नित्यानन्द ।
श्रीअद्वैत गदाधर श्रीवासादि गौर भक्त वृन्द॥

प्रणाम विधि: नीचे दो प्रकार की प्रणाम विधियाँ दी गयी हैं - साष्टांग और पंचांग

---

5 जिस प्रकार आकाश में नेत्र स्पष्ट रूप से किसी पदार्थ को देख पाते हैं उसी प्रकार अधोक्षज विष्णु जी के परम पद का देववृन्द व भक्तवृंद हमेशा दर्शन करते हैं । यहाँ पर सेव्य, सेवक और सेवा; भजनीय, भजनकारी और भजन - इन तीनों का नित्यत्त्व प्रतिपादित हुआ है । अर्थात विष्णुपादपद्म नित्य हैं, उन्हें दर्शन करने वाले वैष्णव लोग भी नित्य हैं व दर्शन या भक्ति भी नित्य है। साधक ऋग्वेद के इस मन्त्र को उच्चारण करते समय इसके अर्थ का चिन्तन व ध्यान करें।

साष्टांग प्रणाम - हाथ, पैर, घुटने, छाती, मस्तक, दृष्टि, मन और वाक्य - इन अष्ट अवयवों द्वारा प्रणाम को 'साष्टांग' प्रणाम कहते हैं ।

पंचांग प्रणाम - घुटने, बाहु, मस्तक, वाक्य और बुद्धि - इन पाँच अंगों के प्रणाम को 'पंचांग' प्रणाम कहते हैं । श्रीविष्णु को बायीं हाथ की ओर, शक्ति अकेले रहने पर उन्हें दायीं हाथ की ओर एवं गुरु-वैष्णवों को सामने रखकर प्रणाम करने की विधि है ।

श्रीहरिभक्तिविलास में नित्य कृत्य के सम्बन्ध में अर्चनकारी की शुद्धता के लिए इस प्रकार व्यवस्था दी गई है - अर्चनकारी ब्राह्ममुहूर्त में कृष्ण-कृष्ण कीर्तन करते हुए बिस्तर का परित्याग करें, हाथ पैर धोएँ तथा दन्तमंजन करें। इसके बाद आचमन पूर्वक रात को व्यवहार किये हुए बासी कपड़े त्याग करके अन्य वस्त्र पहन कर पुनः आचमन करें। इसके बाद परम पवित्र होने की इच्छा करते हुए श्री गुरुदेव के पादपद्मों का ध्यान, उनका स्तव पाठ एवं श्रीकृष्ण कीर्तन व स्मरण करके निम्नलिखित चार श्लोकों का पाठ करें ।

जयति जननिवासो देवकीजन्मवादो
यदुवरपरिषत्स्वैर्दोर्भिरस्यन्नधर्मम् ।
स्थिरचरवृजिनघ्नः सुस्मितश्रीमुखेन
व्रजपुरवनितानां वर्धयन् कामदेवम् ॥
(भा. 10-90- 48)

स्मृते सकलकल्याणभाजनं यत्र जायते ।
पुरुषस्तमजं नित्यं व्रजामि शरणं हरिम् ॥
(विष्णु पुराण 5.17.17)
विदग्धगोपालविलासिनीनां संभोगचिह्नांकितसर्वगात्रम् ।
पवित्रमाम्नायगिरामगम्यं ब्रह्म प्रपद्ये नवनीतचौरम् ॥
(हरि-भक्ति-विलास 3.25)
उद्गायतीनामरविन्दलोचनं व्रजाङ्गनानां दिवमस्पृशद् ध्वनिः ।
दध्नश्च निर्मन्थनशब्दमिश्रितो निरस्यते येन दिशाममङ्गलम् ॥
(भा. 10-05-25)

भगवद् - उपासक पूर्व कथित विधि के अनुसार आचमन के बाद ऋग्वेद में कहे- **“ॐ तद् विष्णोः परमं पदं सदा पश्यन्ति सूरयः । दिवीव चक्षुराततम् ॥”**- मन्त्र को अर्थ चिन्तन के सहित उच्चारण करे एवं उसके बाद गुरु द्वारा उपदेशित गायत्री मन्त्र का कम से कम बारह बार जप करे ।

श्लोकों का भावार्थ : जो अन्तर्यामी रूप से सभी जीवों में अवस्थित हैं, जिनके बारे में इस प्रकार कहा जाता है कि इन्होंने देवकी के गर्भ से जन्म ग्रहण किया है, यदुवंशी लोग जिनकी सभा में सेवक रूप से उपस्थित रहते हैं, जिन्होंने भुजबल से अधर्म का नाश किया; जो वृन्दावन में स्थित वृक्ष-गाय आदि का भी संसार क्लेश नाश करते हैं एवं जो मुस्कुराहट युक्त श्रीमुख से ब्रजवनिताओं (गोपियों) के एवं पुरवासी नारियों के काम को वर्द्धित करते हैं - इस प्रकार के श्रीकृष्ण जय युक्त हों। जिनको स्मरण करने से सब प्रकार का कल्याण हो सकता है, मैं उन्हीं अजन्मा-सनातन पुरूष श्रीहरि की शरण ग्रहण करता हूँ। जो पवित्र होते हुए भी श्रुतिवाक्यों के अगम्य हैं, परब्रह्म होते हुए भी जिनका सारा शरीर चतुर गोपियों के नाखुनों और दन्तों के द्वारा चिन्हित हैं - मैं उसी नवनीत चोर श्रीकृष्ण की शरण ग्रहण करता हूँ। दही मथते समय मथानी (दण्ड)

से उत्पन्न होने वाली 'घूँ-घूँ' (निर्मन्थन) ध्वनि तथा दही मथने वाली व्रज-गोपियों के कण्ठों से निकले हुए 'कमलनयन श्रीकृष्ण' के गुणगान की उच्च ध्वनि, आपस में मिलकर आकाशमण्डल को स्पर्श कर रही है। यह मिश्रित दिव्य ध्वनि सभी दिशाओं में व्याप्त प्राणियों के अमंगलों का विनाश कर रही है। मैं उन नवनीत-चोर श्रीकृष्ण की शरण ग्रहण करता हूँ।

पूजोपकरणसमूह, तुलसी - पुष्पचयन विधि, पुष्पशुद्धि इत्यादि

शास्त्रों में सोलह, बारह, दस अथवा पाँच उपचारों से पूजा का विधान है,

सोलह प्रकार से उपचार :

आसन, स्वागत, पाद्य, अर्ध्य, आचमन, मधुपर्क, पुनराचमन, स्नान, वस्त्र, उपवीत, भूषण, गन्ध, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य, माल्य, नमस्कार ।

बारह प्रकार से उपचार :

आसन , पाद्य, अर्ध्य, आचमन, मधुपर्क, स्नान, वस्त्र, गन्ध, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य ।

पांच प्रकार से उपचार :

गन्ध, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य ।

अर्चनकारियों की जानकारी के लिए आवश्यक द्रव्यों को तैयार करने की विधियाँ भी दी जाती हैं, जैसे

1. **गन्ध :-.** चन्दन, कर्पूर, अगुरु (सुगन्धित काष्ठ) - इन तीनों का एक विशेष परिमाण में बना मिश्रण 'गन्ध' कहलाता है ।

2. **चतुःसम :-** चन्दन (4 भाग), कुमकुम (3 भाग), कस्तूरी (2 भाग), कर्पूर (1 भाग) का मिश्रण चतुःसम कहलाता है।

3. अर्घ्य :- गन्ध, पुष्प और जल के द्वारा अर्घ्य तैयार किया जाता है; परन्तु श्रीविष्णु तत्त्व के लिए अर्घ्य में गन्ध, पुष्प और जल के साथ तुलसी भी देनी पड़ती है।

अर्घ्य विशेष :- जल, दूध, कुशाग्र, दही, अड़ुवा चावल, तिल, जौ तथा सफेद सरसों ।

4. मधुपर्क :- गाय का घी, गाय के दूध से बनी दही, शहद - इन तीनों को बराबर मात्रा में मिलाने पर बना मिश्रण मधुपर्क कहलाता है। कोई-कोई कहता है कि मधुपर्क में इन तीनों द्रव्यों के साथ चीनी भी देनी पड़ती है।

5. पंचामृत :- गाय का घी, गाय के दूध से बनी दही, गाय का दूध, चीनी और शहद - इन पाँचों द्रव्यों से बने मिश्रण को पंचामृत कहते हैं।

पंचामृत व मधुपर्क के लिए पात्र का चयन :

अर्चक को चाहिए कि जिस बर्तन में रखने से मधुपर्क व पंचामृत में विकृति आ जाये, उस बर्तन में न रखना ही अच्छा है। वैसे चांदी अथवा पत्थर के बर्तन में रखना उचित है। अर्चन करते समय, उपरोक्त द्रव्यों में से किसी द्रव्य की कमी हो तो उस द्रव्य के अभाव में उक्त द्रव्य का मानसिक चिन्तन करके उसके बदले में फल या तुलसी देकर पूजा हो सकती है; यदि पुष्प व तुलसी का भी अभाव हो तो पवित्र जल से ही पूजा कर सकते हैं।

पूजा के लिए निम्नप्रकार के पुष्प वर्जित हैं :-

सभी तरह के पुष्प भगवद् पूजा में प्रयोग नहीं किये जाते। सुखे हुए, दबे हुए, बासी, जमीन पर गिरे हुए, कीड़ों से युक्त जिनके ऊपर बाल लगे हों, सुगन्ध हीन, दुर्गन्धयुक्त व फूलों की कलियाँ -

उनसे भगवद् पूजा करना उचित नहीं है। इसके अलावा ऐसे फल - जिन्हें हाथ में लेकर प्रणाम किया हो, जो किसी के द्वारा सुँघे गये हों, जो अपवित्र द्रव्य से स्पर्श हो गये हों, जो शमशान आदि अपवित्र स्थानों में उत्पन्न हुए हों व जो नाभि से नीचे पहने वस्त्र में (पैन्ट इत्यादि की जेब में) लाये गये हों - भी भगवद् सेवा में वर्जनीय हैं।

सुगन्ध युक्त सफेद फूलों द्वारा पूजा करना अच्छा है ।

पुष्प - शुद्धि मन्त्र :

पुष्पे पुष्पे महापुष्पे सुपुष्पे पुष्प सम्भवे ।
पुष्पचयावकीर्णे च हूं फट् स्वाहा ॥

श्रीभगवान् को प्रणाम करते हुए, उनका आदेश लेकर, तुलसी और पुष्प आदि, विधि के अनुसार चयन करना कर्त्तव्य है। बिना स्नान किये तुलसी तोड़ना मना है। असमर्थ व्यक्ति को शुद्ध वस्त्र पहन कर मन्त्र स्नान पूर्वक पवित्र भाव से तुलसी व पुष्प चयन करना चाहिए। **अवैष्णवों द्वारा तुलसी तोड़ना मना है।** स्मृति शास्त्र के अनुसार संक्रांति, अमावस्या, पूर्णिमा, द्वादशी और रविवार को तुलसी तोड़ना मना होते हुए भी वैष्णवों के लिए सिर्फ द्वादशी को तुलसी चयन करना मना है। द्वादशी के लिए पहले से ही अर्थात एकादशी तिथि में तुलसी तोड़कर रख लेनी चाहिए। इसके अतिरिक्त रात को व दोपहर में भी तुलसी तोड़ना मना है।

तुलसी चयन करते समय (तोड़ते समय) निम्न मन्त्र का उच्चारण व मन्त्र के अर्थ का स्मरण करना चाहिए।

तुलस्यमृत जन्मासि सदा त्वं केशवप्रिया ।
केशवार्थे चिनोमि त्वां वरदा भव शोभने ॥[6]

(स्कन्द पुराण)

6 पाठान्तर - केशवाये विचिन्वामि वरदा भव शोभने ।

भगवद्-विग्रह को जगाना और मंगल आरती की विधि

गर्भ मन्दिर के बाहर दरवाजे पर खड़े होकर श्रुति स्तव (श्रीमद्भागवत् 10/87/14-41) का पाठ करते हुए व घन्टा बजाते हुए श्रीभगवान् को जगाना चाहिए अथवा निम्नलिखित मन्त्र द्वारा भगवान् के जागरण के लिए प्रार्थना करनी चाहिए ।

सोऽसावदभ्रकरुणो भगवान् विवृद्ध,
प्रेमस्मितेन नयनाम्बुरुहं विजृम्भण ।
उत्थाय विश्वविजयाय च नो विषादं,
माधव्या गिरापनयतात्पुरुष: पुराण: ॥ 1॥[7]
देव प्रपन्नार्तिहर प्रसादं कुरु केशव ।
अवलोकन दानेन भूयो मां पालयाच्युत ॥ 2॥ [8]

पुष्कर पुराण में भी भगवान् को जगाने के लिए मन्त्र दिया गया है; जो इस प्रकार है-

उत्तिष्ठोतिष्ठ गोविन्द त्यज निद्रां जगत्पते ।
त्वयि सुप्ते जगन्नाथे जगत् सुप्तं भवेदिदम् ॥
उत्थिते चेष्टते सर्वमुत्तिष्ठोत्तिष्ठ माधव ॥

---

7 अर्थ :- आप अपार करुणामय पुराण पुरुष हैं । आप परम प्रेममयी मुस्कान के सहित अपने नेत्र खोलिए और शेष शैय्या से उठकर विश्व के उद्भव के लिए अपनी सुमधुर वाणी से मेरा विषाद दूर कीजिए ।

8 हे देव ! हे शरणागतों के दुखों को हरने वाले ! हे केशव ! मेरे प्रति अपनी कृपा का प्रकाश करें । हे अच्युत ! आप दुबारा दर्शन देकर मुझे पवित्र करें ।

जय जय कृपामय जगतेर नाथ ।
सर्वजगतेरे कर शुभ दृष्टिपात ॥

ऊपर लिखे स्तव को पाठ करने के बाद तीन बार ताली देकर श्रीमन्दिर के अन्दर प्रवेश करना चाहिए। उसके बाद भगवान् की सुन्दर स्तुति अथवा विष्णु-सहस्त्रनाम का पाठ करते हुए तुलसी को छोड़कर भगवान् को अर्पित माला इत्यादि सब उतार दें। तत्पश्चात् श्री कृष्ण के श्रीहस्त, श्रीचरण व श्रीमुख मण्डल को धोने के लिए जल पात्र तथा दन्त-काष्ठ एवं जिह्वा-मार्जनी अर्पण करें। कुछ समय पश्चात् पुन: जल और मुख साफ करने के लिए सुन्दर गमछा प्रदान करके तुलसी अर्पण करें।

इसके बाद श्रीविग्रह को यथोचित मुकुट व वंशी पहनाकर श्रीकृष्ण के प्रिय श्लोक आदि का पाठ करें तथा महावाद्य ध्वनि के साथ, हरि-संकीर्तन करते हुए जगत का मंगल करने वाली मंगल आरती करें। तत्पश्चात् श्रीकृष्ण को मूल मन्त्र के साथ तीन बार पुष्पान्जलि प्रदान करें तथा क्रमानुसार 1) धूप 2) दीप 3) पानी युक्त शंख 4) वस्त्र 5) पुष्प 6) चामर-व्यजन आदि प्रदान करें एवं सर्दी के समय को छोड़कर अन्य समयों पर ताल के पत्र से बने पंखे से हवा करें।

बासी फूल सेवा में नहीं लगते, इसलिए मंगल आरती में फूल नहीं दिए जाते। यदि पुष्पान्जलि देनी हो तो तुलसी और जल द्वारा दी जा सकती है। आरती करने से पहले प्रत्येक द्रव्य श्रीकृष्ण को मूलमन्त्र द्वारा निवेदन करना चाहिए। श्रीकृष्ण को निवेदन करने के बाद हाथ धोने चाहिए। जिस धूप को व्यवहार में लाया जाए, वह किसी प्राणी की हत्या से न बना हो, किन्तु कस्तूरी-युक्त धूप व्यवहार में लायी जा सकती है। धूप अर्पण करते समय धूप का पात्र भगवान् की नाभि से ऊपर उठाना मना है। आरती में दीप की संख्या तीन से कम नहीं होनी चाहिए। वे तीन, पाँच या सात आदि की

संख्याओं में होनी चाहिए। साधारणतः पंच-प्रदीप द्वारा ही आरती की जाती है।

पंचप्रदीप घुमाने की विधि :-

विष्णु के पादपद्म में चार बार, नाभि देश में दो बार, मुख मंडल में एक बार (कोई-कोई तीन बार भी कहते हैं), तथा सब अंगों में सात बार; कूल मिलाकर 14 बार प्रदीप को घुमाना चाहिए। दीप आदि में गाय के दूध का बना घी सर्वोत्तम है, इसके अभाव में सरसों का तेल प्रयोग में ला सकते हैं। परन्तु चर्बी, मज्जा, हड्डी आदि से दीप दान सर्वथा निषिद्ध है।

सफेद रंग की बत्ती को छोड़कर रंगीन बत्ती का उपयोग नहीं करना चाहिए।

आरती के पश्चात् पुजारी गर्भ मन्दिर से बाहर आकर तीन बार शंख ध्वनि करे तथा उसके बाद श्रीगुरु-गौरांग गान्धर्विका गिरधारी जी की तथा अन्य-अन्य जय ध्वनि देना कर्त्तव्य है। ये ध्वनि के पश्चात् श्रीविग्रह के सामने साष्टाँग दण्डवत प्रणाम करना चाहिए तथा चार बार श्रीमन्दिर परिक्रमा करनी चाहिए। मंगल आरती व श्रीमन्दिर परिक्रमा के बाद भगवान् को बाल्य भोग अर्पण करना चाहिए।

नोट - दोपहर में भोग आरती के समय व सन्ध्या आरती के समय भी सभी कार्य मंगल आरती में होने वाले कार्यों की तरह करने चाहिए ।

भगवान् को भोग निवेदन करने की विधि

सबसे पहले श्रीकृष्ण को मूल मन्त्र के साथ भोग निवेदन करना चाहिये। उसके बाद श्रीकृष्ण का प्रसाद श्रीराधिका को **"श्रीं राधिकायै नमः"** इस मन्त्र के साथ निवेदन करना चाहिए अथवा श्रीराधाकृष्ण को एक साथ **"श्रीं क्लीं राधाकृष्णाभ्यां नमः"** इस मन्त्र से भी भोग निवेदन किया जा सकता है। श्री गुरुदेव जी को **"ऐं गुरुवे नमः"** इस मन्त्र से और श्रीगौर सुन्दर जी को **"क्लीं गौराय नमः"** इस मन्त्र से निवेदन करना चाहिए। श्री गुरुदेव को श्रीकृष्ण का, श्रीगौरांग का या श्रीराधाकृष्ण का प्रसाद निवेदन किया जाता है अथवा श्रील गुरुदेव अपने आराध्यदेव जी को भोग निवेदन करके प्रसाद पाएँगे; ऐसी भावना लेकर श्री गुरुदेव जी को अनिवेदित द्रव्य भी निवेदित किया जा सकता है। मन्त्र उच्चारण व घण्टा ध्वनि के साथ, तुलसी पत्र के द्वारा शंख जल से प्रत्येक द्रव्य निवेदन करना चाहिए। अर्चक भोग निवेदन के बाद बाहर आकर श्रीकृष्ण मन्त्र, काम गायत्री, गौर मन्त्र व गौर गायत्री जप करते हुए इष्ट देव के भोजन काल तक प्रतीक्षा करें। उसके बाद पुन: मन्दिर में प्रवेश करके मन्त्र के द्वारा आचमन के लिए जल व तत्पश्चात् पान निवेदन करें। श्रीकृष्ण का प्रसाद सर्व सखी, सर्व वैष्णव, श्रीपौर्णणासी, श्रीवृन्दादेवी और सभी ब्रजवासियों को निवेदन करना कर्तव्य है। श्रीगौरांग का प्रसाद श्री गुरुदेव को निवेदन करना कर्तव्य है।

श्री श्रीराधा-कृष्ण को जिन मन्त्रों से भोग निवेदन करना चाहिए, वे निम्नलिखित हैं :-

एष पुष्पांजलि: श्रीं क्लीं राधाकृष्णाभ्यां नम:।
इदमासनं श्रीं क्लीं राधाकृष्णाभ्यां नम: ।
(आसन में फूल इत्यादि देने चाहिए)
एतत् पाद्यं श्रीं क्लीं राधाकृष्णाभ्यां नम:।
(जल को विसर्जन पात्र में त्याग दें)
इंद आचमनीयं श्रीं क्लीं राधाकृष्णाभ्यां नम: ।
(जल को विसर्जन पात्र में त्याग दें)
इंद मिष्ठान्न - पानीयादिकं बाल्यभोगं श्रीं क्लीं राधाकृष्णाभ्यां नम:।
इंद आचमनीयं श्रीं क्लीं राधाकृष्णाभ्यां नमः।
इंद ताम्बूलं श्रीं क्लीं राधाकृष्णाभ्यां नमः।

भगवान् जी के प्रसाद को राधा जी की सखियों, वैष्णवों, पौर्णमासी तथा ब्रजवासियों को निवेदन हेतु प्रयोग होने वाले मन्त्र:

एष प्रसाद: सर्व सखीभ्यो नमः ।
एष प्रसाद: सर्वब्रजवासिभ्यो नम: ।
एष प्रसाद: पौर्णमास्यै नम: ।
एष प्रसाद: वृन्दायै नम: ।
एष प्रसाद: सर्व वैष्णवेभ्यो नम: ।

श्रीमन्दिर मार्जन :

बाल्यभोग के बाद श्रीकृष्ण संकीर्तन करते हुए, उनके दास्य भाव में गोबर, मिट्टी व पानी के साथ भगवन्मन्दिर मार्जन करना चाहिए। उसके बाद भगवद्-सेवा के पात्र एवं भगवान् के वस्त्र एवं आसनादि साफ करने चाहिए।

पूर्वाह्न (प्रातः काल में) में श्री विग्रह पूजा

प्रातःकाल मन्दिर में प्रवेश करने के बाद पुजारी को चाहिए कि वह पूजा के उपयोगी आसन में बैठकर रीति सहित हरि-गुरु-वैष्णवों का गुणगान करे तथा "**ॐ आधारशक्त्तये नमः**" इस मन्त्र से आसन में पुष्प अर्पण करे। आसन में पुष्प देने के बाद पूजा करते हुए निम्नलिखित स्तव का पाठ करे।

स्तव:- **ॐ आसन मंत्रस्य मेरुपृष्ठ ऋषि: सुतलं छन्दः कुर्मोदेवता आसनोपवेशने विनियोग: ।**[9]

पृथ्वी त्वया धृता लोका देवित्वं विष्णुना धृता ।
त्वन्च धारय मां नित्य पवित्रमासनं कुरू ।[10]

नारद-पंचरात्र में आसन के दोषगुण के सम्बन्ध में इस प्रकार वर्णन है कि बाँस से बने आसन में बैठकर पूजा करने से दरिद्रता आती है, पत्थर से बने आसन में बैठ कर पूजा करने पर रोग उत्पन्न होते हैं, मिट्टी के आसन में बैठने से दुःखों की उत्पत्ति होती है, लकड़ी के आसन पर बैठने से दुर्भाग्य तथा तृण से बने आसन पर बैठने से यश की हानि होती है, पत्ते के आसन पर बैठने से चित्त चंचल होता है और कुशा के आसन पर बैठने से व्याधि नाश होती है, एवं कम्बल

---

9 भावार्थ :- अर्चनकारी को चाहिए कि वह अपने आसन को बिछाते समय आसन को पवित्र करने की अभिलाषा से मन्त्र के ऋषि - मेरुपृष्ठ, मन्त्र के छंद: सुतल व देवला कूर्म भगवान का स्मरण करे ।

10 हे पृथ्वी ! आप सभी लोकों को धारण किये हुई हो, हे देवी ! विष्णु आपको धारण करते हैं । आप भी कृपा करके मुझे नित्य करें एवं इस आसन को पवित्र करें ।

के आसन पर बैठने से दुःखों का मोचन होता है अत: अर्चक को चाहिए कि वह पूजा के समय उपयुक्त आसन पर पद्मासन अथवा स्वस्तिकासन में बैठे।

वैष्णवों के लिए किसी प्रकार का भी चमड़े का आसन उपयोग करना उचित नहीं है ।

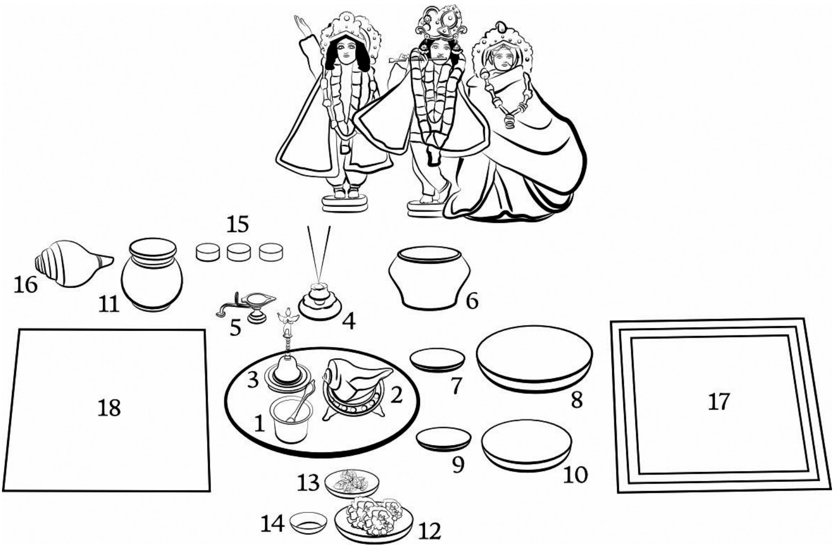

1. पंचपात्र
2. अभिषेक शंख
3. घंटी
4. अगरबत्ती / धूप
5. घी का दीपक
6. विसर्जन पात्र
7. ठाकुर जी का पूजा पात्र
8. ठाकुर जी का स्नान पात्र
9. श्री गुरुदेव का पूजा पात्र
10. श्री गुरुदेव का स्नान पात्र
11. जल का कलश
12. फूल
13. तुलसी
14. चंदन
15. चीनी, घी और शहद (मधुपर्क)
16. बजाने वाला शंख
17. ठाकुर जी का आसन
18. पुजारी का आसन

आसन में बैठ कर पुजारी को चाहिए कि वह अपने बिल्कुल सामने पूजा के पात्रादि स्थापन करे। अपने बायीं ओर आधार (त्रिपदी) सहित शंख, पाद्य अर्घ्य व आचमनीय-मधुपर्क पात्र रखे। अपने दायीं ओर चन्दन, तुलसी व पुष्पादि के पात्र रखे। आधार के ऊपर बजाने वाला शंख, घण्टा व पानी की कलसी तथा लोटे को भी पुजारी अपने बायीं ओर रखे। अर्चक अपने दायीं ओर दीप तथा बायीं ओर धूप रखे। विसर्जनीय पात्र तथा अन्यान्य पात्र भी पुजारी अपनी निगाहों के सामने रखे। अपने पीछे हाथ इत्यादि धोने के लिए पात्र रखे। हाँ, प्रत्येक पात्र के ऊपर 8 बार मूलमंत्र का जप अवश्य करें।

पंचपात्र में जल स्थापन :

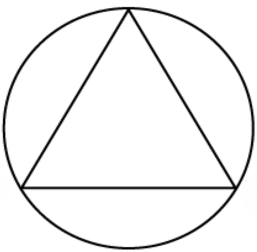

पंचपात्र अथवा कोशा (पानी डालने का बड़ा चम्मच) में जल स्थापन करने के लिए अर्चनकारी अपने सामने जमीन पर त्रिकोण मंडल अंकित करे तथा "**ॐ अस्त्राय फट्**" इस अस्त्र-मन्त्र से पंचपात्र को धोएं।

ॐ आधारशक्तये नमः इस आसन मन्त्र से त्रिकोण मंडल में आसन स्थापित करें।

ॐ हृदयाय नमः इस मन्त्र से पंचपात्र में गन्ध व पुष्प डालें।

ॐ शिरसे स्वाहाः इस मन्त्र से पंचपात्र को पानी से भर दें।

ॐ अं अर्कमण्डलाय द्वादश कलात्मने नमः इस मन्त्र से गन्ध-पुष्प द्वारा पंचपात्र की पूजा करें।

ॐ सोममण्डलाय षोड़शकलात्मने नमः इस मन्त्र द्वारा

पंचपात्र के पानी की पूजा करें।

इसके बाद जल में तीर्थ मन्त्र के द्वारा सभी तीर्थों का आवाहन करें तथा जल को स्पर्श और आच्छादन पूर्वक 8 बार मूलमन्त्र का जप करें।

शंख-स्थापन - अर्चक अपने सामने बायीं ओर भूमि पर त्रिकोण मंडल अंकित करके "**ॐ अस्त्राय फट्**", इस अस्त्र मन्त्र से त्रिपदी को धोयें तथा "**ॐ आधारशक्तये नमः**" - इस आसन मन्त्र से त्रिपदी को त्रिकोण मण्डल के ऊपर स्थापन कर दें।

"**ॐ अस्त्राय फट्**" मन्त्र से शंख को धोकर त्रिपदी के ऊपर स्थापन करें तथा उसके बाद "**ॐ हृदयाय नमः**" इस मन्त्र से गन्ध-पुष्प और तुलसी को शंख के बीच में डाल दें। इसके बाद "**ॐ शिरसे स्वाहा**" - इस मन्त्र से शंख को पानी से भर दे तथा "**ॐ मं वह्निमण्डलाय दशकलात्मने नमः**" - मन्त्र से गन्ध तथा पुष्प से त्रिपदी की पूजा करें।

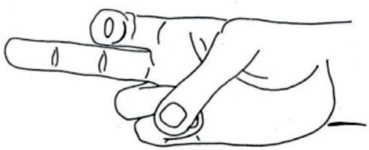

अंकुश-मुद्रा

"**ॐ अं अर्कमण्डलाय द्वादशकलात्मने नमः**" मन्त्र से गन्ध, तुलसी तथा पुष्प के द्वारा शंख (आधार सहित) की पूजा करें। पुनः "**ॐ उं सोममण्डलाय षोड़शकलात्मने नमः**" मन्त्र से गन्ध एवं पुष्प द्वारा शंख में स्थित जल की पूजा करें। इसके बाद '**अंकुश-मुद्रा**' प्रदर्शित करते हुए शंख के जल में समस्त तीर्थों का आवाहन करें। तत्पश्चात् जल को स्पर्श एवं आच्छादित करके मूल मन्त्र का आठ बार जप करें। शंख के कुछ जल से

उपस्थित सभी पूजा-पात्रों एवं उपकरणों पर प्रोक्षण (छींटा) दें। तदुपरान्त पुष्प व तुलसी से शंख-जल को मूल मन्त्र द्वारा 8 बार अभिमंत्रित करते हुए अपने शरीर एवं मस्तक पर तीन बार छींटा दें। अंत में, शंख के अवशिष्ट जल को विसर्जन-पात्र में डालकर, "**ॐ शिरसे स्वाहा**" मन्त्र के साथ पुनः शंख को शुद्ध जल से भरकर भगवान् के सम्मुख स्थापित कर दें। इस प्रक्रिया से साधक का शरीर और समस्त पूजा-सामग्री विशेष रूप से शुद्ध और चैतन्य हो जाते हैं।

घण्टा स्थापन :

अर्चनकारी अपने बायीं ओर आधार के ऊपर घण्टा स्थापन करके **"ॐ जयध्वनि मन्त्रमात्रे स्वाहा"** मन्त्र से गन्ध तथा पुष्प से घण्टा की पूजा करें।

घण्टा शुद्धि मन्त्र : सर्ववाद्ययी घण्टे देव देवस्य वल्लभे ।
त्वं बिना नैव सर्वेषां शुभ भवति शोभने॥

धूप दान मन्त्र : वनस्पतिरसोत्पन्नो गन्धादयो गन्ध उत्तमः ।
आघ्रेयः सर्वदेवानां धूपोऽयं प्रतिगृह्यताम् ॥

दीप दान मन्त्र : स्वप्रकाशो महातेजाः सर्वतस्तिमिरापहः ।
स बाह्यभ्यन्तरज्योतिर्दीपोऽयं प्रतिगृह्यताम् ॥

इसके बाद "**ॐ नमो दीपेश्वराय नमः**" - इस मन्त्र से दीप के ऊपर पुष्पांजली अर्पण करें ।

श्रीविष्णु स्मरण व मंगलशान्ति :

पूजा से पहले शास्त्र-सम्मत् श्रीविष्णु स्मरण व मंगलशान्ति पाठ करें। श्रीविष्णु-स्मरण, जैसे -

ॐ यं ब्रह्म वेदान्तविदो वदन्ति परे प्रधानं पुरुष तथाऽन्ये ।
विश्वोद्गते: कारणमीश्वरं वा तस्मै नमो विध्नविनाशाय ॥

ॐ तद् विष्णोः परमं पदं सदा पश्यन्ति सूरयः ।
दिवीव चक्षुराततम् ॥
ॐ तद्विष्णोः परमं पदम् ॥

ॐ माधवो माधवो वाचि, माधवो-माधवो हृदि ।
स्मरन्ति साधव: सर्वे सर्वकार्येषु माधवम् ॥।

ॐ कृष्णे वै सच्चिदानन्दघन:, कृष्ण - आदि पुरुष: कृष्णः
पुरुषोत्तम: कृषो हा उ कर्मादिमूलम्, कृष्ण: स ह
सर्वेकार्य: कृष्ण: काशंकृदादीशमुस्वप्रभु पूज्य;
कृष्णोऽनादि: तस्मिनजान्डान्तर्वाह्म यत् मंगलं तत् लभते कृती ॥

(ॐ) हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे ।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे ॥

अर्थ : - जिसे वेदान्त के विद्वान लोग 'ब्रह्म ', और दूसरे लोग 'प्रधान', उसी प्रकार कोई-कोई "पुरुष" तथा और कोई विश्वोत्पत्ति का कारण ईश्वर कहते हैं, उसी विघ्न विनाशकारी को नमस्कार है। कृष्ण ही सच्चिदानन्दघन, कृष्ण ही आदि पुरुष, कृष्ण ही पुरुषोत्तम हैं । कृष्ण ही कर्म प्रवृति के मूल हैं, कृष्ण सभी के एकमात्र प्रभु हैं, कृष्ण ही ब्रह्मा - विष्णु व शिवादि प्रमुख देवताओं के भी पर हैं और पूज्य हैं । कृष्ण अनादि हैं, ब्रह्माण्ड के अन्दर-बाहर जितने प्रकार मंगल हैं - कृष्ण की सेवा करने वाले को - वे समस्त मंगल कृष्ण की कृपा से सुगमता से प्राप्त होते हैं।

मंगलशान्ति

हाथ में कुमकुमाक्त व हरिद्राक्त[11] चावल अथवा सुगन्धित पुष्प लेकर पाठ करें -

ॐ स्वस्ति नो गोविन्द: स्वस्ति नोऽच्युतानन्तौ,
स्वस्ति नो वासुदेवो विष्णुर्दधातु ।
स्वस्ति नो नारायणो नरो वै,
स्वस्ति नः पद्मनाभ: पुरुषोत्तमो दधातु ।
स्वस्ति नो विश्वक्सेनो विश्वेश्वर:,
स्वस्ति नो हृषीकेशो हरिर्दधातु,
स्वस्ति नो वैनतेयो हरि:,
स्वस्ति नोऽन्जनासुतो हनुर्भागवतो दधातु ।
स्वस्ति स्वस्ति सुमङ्गलैकेशो महान,
श्रीकृष्ण: सच्चिदानन्दघन: सर्वेश्वरेश्वरो दधातु (1)[12]
करोतु स्वस्ति मे कृष्ण: सर्वलोकेश्वरेश्वर: ।
कार्ष्ण्यादयश्च कुर्वन्तु स्वस्ति मे लोकपावना: ॥(2)[13]
कृष्णो ममैव सर्वत्र स्वस्ति कुर्यात् श्रियासमम्।
तथैव च सदा कार्ष्णि: सर्वविघ्नविनाशन: ॥(3)[14]
(ॐ) हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे ।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे ॥

---

11 कुमकुमाक्त व हरिद्राक्त चावल-कुमकुम व हल्दी से युक्त चावल अर्थात ऐसे चावल जिनमें कुमकुम व हल्दी मिला रखी हो।

12 गोविन्द अच्युत, अनन्त-हमारा मंगल विधान करें । वासुदेव, विष्णु हमारा मंगल विधान करें। नर-नारायण, पद्मनाभ, पुरुषोत्तम:, विश्वक्सेन, हृषीकेश, हरि हमारा मंगल विधान करें। विनतानन्दन हरि (गरड़), अन्जनानन्दन भागवत हनुमान जी हमारा मंगल विधान करें। सुमंगलों के एकमात्र विधाता, सभी ईश्वरों के ईश्वर, सच्चिदानन्द विग्रह, महान् श्रीकृष्ण - हम लोगों का अतिशंय मंगल विधान करें।(1)

13 सब लोकों के ईश्वरों के भी ईश्वर श्रीकृष्ण मेरा मंगल करें । लोकपावन कृष्ण भक्त भी मेरा मंगल करें।(2)

14 अर्थ : श्री राधा जी के साथ श्रीकृष्ण ही सभी विषयों में मेरा मंगल करें तथा सर्वविघ्नविनाशकारी श्रीकृष्ण के निज जन भी सर्वदा मेरा मंगल करें।(3)

श्रीगुरुदेव जी को प्रणाम :-

श्रीगुरुदेव, परमगुरुदेव, परमेष्ठी (परमगुरुजी के गुरुजी) परात्पर गुरुदेव (परमेष्ठी गुरुदेव जी के गुरुदेव) एवं अन्यान्य गुरुवर्गों को प्रणाम करने की क्रमानुसार विधि (जो कि पहले बतलायी गयी है) से उन सभी को प्रणाम करते हुए प्रार्थना करें | इसके बाद सिंहासन में श्रीभगवान् के बायीं ओर '**ऐं गुरुवे नमः**', '**ऐं श्रीपरमगुरुवे नमः**' '**ऐं परमेष्ठिगुरुवे नमः**', '**ऐं श्रीगुरुपरम्परायै नमः**', '**ॐ सर्वगुरुत्तमाय श्रीकृष्ण चैतन्याय नम:**' - इन मन्त्रों को उच्चारण करके प्रणाम करें ।

भूतशुद्धि :-

"नादेवो देवमर्चयेत् '। अदेव (जो देवता नहीं है) होकर देवता की पूजा नहीं की जा सकती अर्थात प्राकृत भूमिका में अवस्थित मायाबद्ध जीव कभी भी अप्राकृत भूमिका में विराजमान मायातीत, इष्टदेव की पूजा में समर्थ नहीं हो सकता। इसीलिए "मैं अयोग्य हूँ", श्री गुरुदेव जी की कृपा से योग्यता लाभ करके अप्राकृत इष्टदेव जी की पूजा कर रहा हूँ, अर्चनकारी के इस प्रकार के ज्ञान का नाम ही भूत शुद्धि है। विभिन्न सम्प्रदायों में भूत शुद्धि की व्यवस्था भी विभिन्न प्रकार की है। अतएव पूजक अपनी-अपनी सम्प्रदाय प्रणाली का अनुसरण करें।

भूतशुद्धि का अर्थ इस प्रकार है कि -"मैं जड़ देह-मन से अतीत शुद्ध-चिन्मय- आत्मस्वरूप एवं श्रीकृष्ण जी की तटस्था शक्ति या जीव शक्ति से परिणत (उत्पन्न) जीव हूँ, अतएव मैं श्रीकृष्ण का विभिन्नांश होते हुए भी वस्तुत: उनसे अलग नहीं हूँ। मैं शुद्ध-बुद्धि (ज्ञान)-मुक्त-स्वभाव वाले भगवान् का नित्य सेवक

हूँ मैं श्रीकृष्ण की शक्ति का अंश अर्थात् नित्य-अधीन दास मात्र हूँ। मैं उनकी कृपा का भिखारी होकर उनके प्रियतम अन्तरंग सेवक श्रीगुरुदेव जी की नित्य अनुगत भाव से सेवा करने वाला हूँ। यहाँ पर अभी मुझे श्रीगुरुदेव जी की आज्ञा से ही उनके आनुगत्य में "श्री श्रीगुरु-गौरांग-गान्धर्विका गिरिधारी जी' की सेवा का सौभाग्य प्राप्त हुआ है - अर्चनकारी अपने हृदय में इस प्रकार चिन्तन और दृढ़ धारणा बनाएँ तथा निम्नलिखित मन्त्र का ध्यान तथा पाठ करें-

नाहं विप्रो न च नरपतिर्नापि वैश्यो न शूद्रो
नाहं वर्णी न च गृहपतिर्नो वनस्थो यतिर्वा ।
किन्तु प्रोद्यन्निखिल-परमानन्द-पूर्णामृताब्धे-
र्गोपीभर्तुः पदकमलयोर्दासदासानुदासः ॥(1)

मैं ब्राह्मण नहीं हूँ, क्षत्रिय राजा नहीं हूँ, वैश्य या शूद्र नहीं हूँ; मैं ब्रह्मचारी नहीं हूँ, गृहस्थ भी नहीं हूँ, वानप्रस्थी व सन्यासी भी नहीं हूँ; किन्तु में उन्मीलित अर्थात नित्य स्वतः प्रकाशमान - निखिल परमानन्द से अमृत समुद्र के तुल्य - श्रीकृष्ण के पद कमलों के दासों के दासों का दास मात्र ही हूँ।(1)

ध्यान मन्त्र -

दिव्य-श्रीहरिमन्दिराढ्य-तिलकं कण्ठं सुमालान्वितं
वक्षः श्रीहरिनाम-वर्ण-सुभगं श्रीखण्ड-लिप्तं पुनः ।
पूतं सूक्ष्म-नवाम्बरं विमलतां नित्यं वहन्तीं तनुं
ध्यायेत् श्रीगुरु-पादपद्म-निकटे सेवोत्सुकं चात्मनः ॥(2)

शरीर के विभिन्न बारह भागों में श्रीहरिमन्दिर समुज्जवल दिव्य तिलक, कण्ठ में सुन्दर-सुन्दर माला सुशोभित, श्रीहरि नामाक्षर युक्त सुन्दर और चन्दनलिप्त वक्ष स्थल, पतले तथा नये वस्त्र धारण किये तथा नित्य पवित्र भाव धारण करके अत्यन्त उत्साह के साथ श्रीगुरु पादपद्मों के निकट सेवा के लिए अवस्थित हूँ - इस प्रकार का ध्यान करें। (2)

गुरु पूजा

"चिन्मय श्री नवद्वीप धाम के बीच श्रीधाम मायापुर है, वहां पर श्री योगपीठ में रत्नमंडप में श्री गौरांग महाप्रभु विराजित हैं। उनके दायीं ओर श्री नित्यानन्द प्रभु, बायीं ओर श्री गदाधर, सामने हाथ जोड़े हुए श्री अद्वैत आचार्य हैं तथा श्रीवास पंडित छत्र धारण किये हुए सिंहासन के सामने खड़े हैं एवं श्रीगुरुदेव भी निम्न वेदी पर बैठे हैं।" - इस प्रकार के चिन्तन के साथ श्री गुरुदेव जी का ध्यान करते हुए अपनी योग्यता के अनुसार उनकी सोलह, बारह, दस या पंचोपचार से पूजा करें। (चौंसठ उपचार से भी पूजा की विधि है।)

गुरु- ध्यान :

प्रातः श्रीमन्नवद्वीपे द्विनेत्र द्विभुज गुरुम् ।
वराभयप्रद शान्तं स्मरेत् तन्नामपूर्वकम् ॥1॥
संसार दावानल लीढ़ लोकत्राणाय कारुण्यघनाघनत्वम् ।
प्राप्तस्य कल्याणगुणार्णवस्य वन्दे गुरोः श्रीचरणारविन्दम् ॥2॥
निकुञ्ज-युनो रति-केलि-सिद्धयै या यालिभिर् युक्तिर् अपेक्षणीया।
तत्रातिदाक्षादतिवल्लभस्य वन्दे गुरोः श्रीचरणारविन्दम् ॥3॥
साक्षाद्धरित्वेन समस्त शास्त्रै रुक्तस्तथा भाव्यत एव सद्भिः ।
किन्तु प्रभोर्य प्रिय एव तस्य वन्दे गुरोः श्रीचरणारविन्दम् ॥4॥[15]

---

15 भावार्थ :- प्रातः काल में श्री नवदीप धाम में विराजमान दो नेत्र, द्विभुज श्रेष्ठ - अभय दान करने वाले, शान्तमूर्ति श्री गुरुदेव को उनका नाम उच्चारण करते हुए स्मरण करना चाहिए।(1)

संसार रूप दावानल से तपित-जनमात्र की रक्षा करने के लिए, दया के भाव को बरसाने में वर्षा के घने मेघों के भाव को प्राप्त होने वाले, कल्याण - गुणनिधि श्री गुरुदेव के शोभायुक्त चरणारविन्द की मैं वन्दना करता हूँ।(2)

निकुन्ज विहार -परायण श्री राधाकृष्ण रूप-युवक, युगल सरकार की

श्री गुरुदेव के ध्यान के बाद कम से कम तीन बार उनका जय गान करना चाहिए यथा - जय नित्यलीला प्रविष्ट ॐ 108 श्री श्रीमद् भक्ति बल्लभ तीर्थ गोस्वामी महाराज विष्णुपाद की जय।

मानस पूजा व अन्तर्याग -

जितनी देर व जितने प्रकार से मन की तृप्ति होती है, उतनी देर व उतने प्रकार से ध्यान व प्रार्थना करके सर्व उपचारों के द्वारा मन से कल्पना करके सबसे पहले मानस पूजा करना कर्त्तव्य है।

बाह्य उपचारों द्वारा पूजा :

मानस पूजा के बाद अनुज्ञा (अनुमति) लेकर बाह्योपचार से पूजा प्रारम्भ करें। दीक्षा के समय श्री गुरुदेव से प्राप्त श्री गुरु मन्त्र द्वारा गुरु पूजा करनी चाहिए ।

श्रीगुरुदेव का स्नान :

श्रीगुरुदेव जी को स्नान करने के पवित्र स्थान पर, सम्मान के साथ बुलाकर स्नान करा रहा हूँ - इस प्रकार का चिन्तन करते हुए स्नान के पात्र में आसन, पाद्य, आचमन आदि निवेदन करके श्री गुरुदेव को स्नान कराना चाहिए । जैसे -

"इदं आसनं ऐं गुरुवे नमः" - इस मन्त्र से स्नान के पात्र में आसन के लिए चन्दन से युक्त पुष्प रखें ।

रमणीयक्रिया की सिद्धि के लिए, श्रीललिता - विशाखा आदि सखियों द्वारा जो -जो युक्ति अपेक्षित है -उस युक्ति में अनन्त चतुरता के कारण अपने इष्ट देव के अतिप्यारे श्री गुरुदेव जी के शोभायुक्त चरणारविन्द की मैं वन्दना करता हूँ । (3)

जिन श्री गुरुदेव जी के स्वरूप को समस्त शास्त्र श्रीहरि का साक्षात स्वरुप बतलाते हैं तथा सज्जनों द्वारा अनुभव में भी जो इसी प्रकार से लाये जाते हैं; किन्तु अपने प्रभु के जो अतिशय प्यारे हैं, उन श्रील गुरुदेव जी के शोभा युक्त चरणारविन्द की मैं वन्दना करता हूँ। (4)

"प्रभो ! कृपया स्वागतं कुरु, ऐं गुरुवे नमः" - इस मन्त्र से श्री गुरुदेव का आसन पर आवाहन करना चाहिए ।

"एतत् पाद्यं ऐं गुरुवे नमः" - इस मन्त्र के द्वारा कुशी (पानी डालने का बड़ा चम्मच) से स्नान पात्र में गुरुदेव के पादपद्म में चरण धुलाने की भावना से पानी देना चाहिए ।

"इदं आचमनीयं ऐं गुरुवे नमः" - इस मन्त्र से कुशी द्वारा आचमन के लिए पानी को विसर्जन पात्र में डाल दें ।

इसके बाद भावना से श्री गुरुदेव को तेल मर्दन करके -

"इदं स्नानीयं ऐं गुरुवे नमः" - इस मन्त्र से कर्पूर आदि सुगन्धित वस्तुओं[16] के साथ शंख जल से घन्टा बजाते हुए तथा स्तवादि पाठ करते हुए स्नान कराना चाहिए अर्थात स्नान भावना के साथ स्नान पात्र[17] में पानी डालें

स्नान के बाद पतले व सूखे वस्त्र से श्रीअंगों को (श्रीमूर्ति या आलेख को) श्रीगुरु मन्त्र का जप करते हुए पोंछ दें । उसके बाद -

"इदं सोत्तरीयं वस्त्र ऐं गुरुवे नमः" - इस मन्त्र से गुरुदेव को वस्त्र दिया जा रहा है, ऐसी भावना करके दो पुष्प अथवा दो बार जल विसर्जन पात्र में प्रदान करें ।

"इदं आचमनीयं ऐं गुरुवे नमः" - इस मन्त्र से पहले की तरह विसर्जन पात्र में पानी डालें ।

---

16 पंचामृत आदि द्वारा सब समय स्नान कराना उचित नहीं है। किसी विशेष समय में पंचामृतादि द्वारा स्नान करवा करके सुगन्धित शुद्ध जल द्वारा स्नान करवाना होगा । बासी पानी से स्नान करवाना मना है।

17 श्री चरणामृत : - स्नान पात्र का पानी - चरणामृत अच्छी तरह से शुद्ध पात्र में संरक्षण करना चाहिए ।

श्रीमूर्ति का प्रसादन-

इसके बाद श्रीगुरुदेव सिंहासन में आकर बैठे हैं - इस प्रकार की भावना से सिंहासन को निर्दिष्ट स्थान में स्थापन करके श्रीमूर्ति के चरण (हृदय) स्पर्श करते हुए मूर्ति-देवता मन्त्र (गुरुमन्त्र) का 8 बार जप करना चाहिए । ये ही श्रीमूर्ति का प्रसादन है। श्रीमूर्ति के प्रसादन द्वारा और स्थिर चित्त द्वारा अर्चक की आत्मशुद्धि होती है।

इसके बाद आसन आदि के क्रम द्वारा सभी उपचारों से श्री गुरुदेव की पूजा करें । सामने एक अर्चन पात्र रखकर उसके ऊपर ही अर्चन करें ।

"**इदं आसन ऐं गुरुवे नमः**" - इस मन्त्र से अर्चन पात्र में पुष्प दें ।

"**एतत् पाद्यं ऐं गुरुवे नमः**" - इस मन्त्र से चम्मच आदि के द्वारा विसर्जनीय पात्र में जल डालें ।

"**इदं अर्घ्यं ऐं गुरुवे नमः**" - इस मन्त्र से अर्घ्य (गन्ध, पुष्प,जल) अर्चन पात्र में दें ।

"**इदं आचमनीयं ऐं गुरुवे नमः**" - इस मन्त्र से चम्मच के द्वारा विसर्जनीय पात्र में जल डालें ।

"**एष मधुपर्क ऐं गुरुवे नमः**" - मधुपर्क अर्चन पात्र में दें अथवा अन्य पात्र में रखकर निवेदन करें ।

"**इदं आचमनीयं ऐं गुरुवे नमः**"

"**इदं उपवीतं ऐं गुरुवे नमः**" - इस मन्त्र के द्वारा उपवीत (जनेऊ) प्रदान करें। उपवीत के अभाव में अर्चन पात्र में पुष्प दें।

"**इदं तिलकं ऐं गुरुवे नमः**" - इस मन्त्र से पुष्प को चन्दन

लगाकर अर्चन पात्र में चन्दन दें एवं श्रीमूर्ति को उर्ध्वपुंड तिलक करें।

"इदं आचमनीयं ऐं गुरुवे नमः" - पूर्ववत् ।

"इदं आभरणं ऐं गुरुवे नमः" - इस मन्त्र का पाठ करते हुए अर्चन पात्र में पुष्प दें ।

"एष गन्ध ऐं गुरुवे नमः" - इस मन्त्र से पुष्प में चन्दन लगाकर अर्चन पात्र में चन्दन दें । श्रीमूर्ति के चरणों में भी दें (दो बार)[18]

"इदं सगन्धं पुष्पं ऐं गुरुवे नमः" - इस मन्त्र से गन्ध युक्त फूल सिंहासन में स्थित श्रीमूर्ति के चरणों में दें तथा अर्चन पात्र में भी दें (दो बार)।

"एष धूप ऐं गुरुवे नम:" - इस मन्त्र से विसर्जनीय पात्र में जल त्याग करें।

"एष दीप ऐं गुरुवे नमः" - मन्त्र उच्चारण पूर्वक विसर्जनीय पात्र में जल डालें ।

इसके बाद पुष्पांजलि, आसन, पाद्य, आचमन आदि पहले की तरह निवेदन करना चाहिए । तत्पश्चात् -

"इदं नैवेद्यं ऐं गुरुवे नमः" - नैवेद्य पात्र में शंख -जल के साथ तुलसी दें।

"इदं पानकं ऐं गुरुवे नम:" - पानी (शर्बत आदि) में शंख जल के साथ तुलसी दें ।

---

18 द्रष्टव्य :- श्रीगुरुदेव और वैष्णवगण - आश्रयविग्रह व शक्ति तत्व हैं। अतएव उनके चरणों में तुलसी अर्पण करना मना है। एकमात्र विषयविग्रह या शक्तिमान (भगवान) के चरणों में ही तुलसी - अर्पण करने की विधि है। आश्रयविग्रह को नाभि से ऊपर वक्ष:स्थल पर या हाथ में तुलसी देना ही विधि है।

“इदं पानीयं ऐं गुरुवे नमः” - इस मन्त्र द्वारा पानी के पात्र में, शंख जल के साथ तुलसी दें।

“इदं आचमनीयं ऐं गुरुवे नमः” पूर्ववत्।

आचमन के बाद “देवता को” अर्थात् गुरुदेव सिंहासन में बैठे हुए चिन्ता करके-

"इदं ताम्बूलं ऐं गुरुवे नमः” - इस मन्त्र द्वारा ताम्बूल पात्र में शंख-जल और तुलसी दें।

“इदं माल्यं ऐं गुरुवे नमः” - इस मन्त्र द्वारा श्रीमूर्ति को माला पहनाएँ। माला के अभाव में पुष्प अर्पण करें।

इसके बाद यथाशक्ति श्रीगुरुमन्त्र और श्रीगुरुगायत्री का जप करें। जप कम से कम 12 बार करना चाहिए। इसके बाद स्तुति व प्रणाम करना न भूलें।

स्तुतिः[19]

श्रीचैतन्यमनोऽभीष्टं स्थापितं येन भूतले।
स्वयं रूप: कदा मह्यं ददाति स्वपदान्तिकम् ॥1॥
त्वं गोपिका वृषरवेस्तनयान्तिकेऽसि
सेवाधिकारिणि गुरो निजपाद पद्मे।
दास्यं प्रदाय कुरु मां ब्रजकानने
राधाङ्घ्रि-सेवन-रसे सुखिनीं सुखाब्धे ॥2॥

---

19 स्तुति अर्थ :- जिन्होंने पृथ्वी में श्री चैतन्य देव जी का आन्तरिक अभीष्ट स्थापन किया, वही स्वयं श्रीरूप गोस्वामी (श्रीरूपानुग श्रेष्ठ श्रीगुरुदेव) कब मुझे अपने पादपद्मों की सानिध्यता (निकटता) प्रदान करेंगे ॥1॥

हे सेवा प्रदान करने वाले आनन्दाम्बुधि गुरुदेव ! आप वृषभानु नन्दिनी के निकट रहने वाली गोपी हो। आप अपने पादपद्मों का दास्य प्रदान करके मुझे ब्रज के कानन में श्रीराधा जी के पादपद्म के सेवानन्द से सुखी करें॥2॥

प्रणाम मन्त्र

ॐ अज्ञानतिमिरान्धस्य ज्ञानांजन-शलाकया ।
चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नम: ॥3॥[20]
मूकं करोति वाचालं पंगुं लंघयते गिरिम् ।
यत्कृपा तमहं वन्दे श्रीगुरुं दीनतारणम् ॥4॥[21]

राधा सम्मुख संसक्तिं सखीसंग निवासिनीम्।
त्वाहं सतत वन्दे माधवाश्रयविग्रहाम् ॥5॥[22]

नाम-श्रेष्ठं मनुमपि शचिपुत्रमत्र स्वरूपं
रूपं तस्याग्रज-मुरुपुरीं माथुरीं गोष्ठवाटीम् ।
राधाकुण्डं गिरिवर-महो राधिका-माधवाशां
प्राप्तो यस्य प्रथित-कृपया श्रीगुरुं तं नतोऽस्मि ॥6॥[23]

वैष्णव - प्रणाम मन्त्र :

वान्छाकल्पतरुभ्यश्च कृपासिन्धुभ्य एव च ।
पतितानां पावनेभ्यो वैष्णवेभ्यो नमो नम : ॥7॥[24]

---

20 जिन्होंने ज्ञान की अंजन (सुरमा) युक्त शलाका (सलाई) द्वारा अज्ञान रुपी घोर अन्धकार से अन्धी मेरी आँखों को खोल दिया है, मैं उन्हीं गुरुदेव को नमस्कार करता हूँ ॥3॥

21 जिनकी कृपा से गूँगा भी वाचाल हो जाता है, लंगड़ा भी पर्वत को पार कर लेता है - उन्हीं दीन लोगों का उद्धार करने वाले श्री गुरुदेव की मैं वन्दना कर रहा हूँ ॥4॥

22 श्रीराधा जी के सानिध्य में आसक्त, सखियों के साथ अवस्थित, माधव जी के आश्रय-विग्रह - आपकी (श्रीगुरुदेव की) मैं हमेशा वन्दना करता हूँ॥5॥

23 अहो ! जिनकी अपार कृपा से इस जगत में सभी भगवद् नामों के बीच श्रेष्ठ नाम और मन्त्र, श्रीशचीनन्दन, श्रीस्वरुप, श्रीरूप, श्रीरुपाग्रज (श्रीसनातन), विशाल मथुरापुरी, गोष्ठवाटिका, राधाकुण्ड, गोवर्धन-गिरिवर एवं श्रीराधामाधव की सेवा की आशा प्राप्त हुई है - मैं उन्हीं श्री गुरुदेव के चरणों में प्रणाम करता हूँ ॥6॥

24 अपने सेवकों की अभिलाषा पूर्ति के लिए कल्पतरु के समान एवं कृपा के सिन्धु स्वरूप तथा पतितों को पावन करने वाले वैष्णवों के लिए हमारा बारम्बार प्रणाम है॥7॥

स्वात्मर्पण या आत्म समर्पण :

अंशो भगवतोऽस्म्यहं सदा दासोऽस्मि सर्वथा ।
तत्कृपाप्रेक्षको नित्यं तत्प्रेष्ठसात् करोमि स्वम् ॥8॥[25]
मां मदीयं च सकलं श्रीगुरवे समर्पयामि॥9॥[26]

"इदं सर्वं ऐं गुरुवे नमः" - इस मन्त्र द्वारा श्रीगुरुदेव के चरणों में पुष्प प्रदान करें।

ॐ तत् सत् ॐ

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे ।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे ॥

श्री चरणामृत ग्रहण - इसके बाद निम्नलिखित श्लोक के उच्चारण के साथ एवं भक्ति भाव से श्रीगुरुजी का चरणामृत ग्रहण करें।

अशेष - क्लेशनिःशेषकारणं शुद्धभक्तिदम् ।
गुरूपादोदकं पीत्वा शिरसा धारयाम्यहम् ॥10॥[27]

---

25 मैं श्रीकृष्ण का विभिन्नांश हूँ अर्थात श्री कृष्ण की तटस्था शक्ति का अंश हूँ इसलिए मैं सर्वदा सब प्रकार से उनका दास हूँ । मैं नित्य उनके (श्रीकृष्णके) प्रति कृपा प्रार्थी होकर उनके ही अत्यन्त प्रियजन के निकट आत्मसमर्पण कर रहा हूँ॥8॥

26 मैं और मेरा कहने से जो कुछ भी समझा जाता है, वह सभी मैं श्रीगुरुपादपद्म में अर्पण कर रहा हूँ ॥9॥

27 अनन्त क्लेशों को नाश करने वाले व शुद्ध भक्ति प्रदान करने वाले श्रीगुरु के पादोदक का पान करके मैं उसे मस्तक पर धारण कर रहा हूँ ॥10॥

श्री गौराङ्ग पूजा

श्री गुरु पूजा के बाद श्री गुरुदेव की अनुमति लेकर व उनकी कृपा प्रार्थना करते हुए पंचतत्वात्मक श्रीगौरांग का अर्चन करना कर्त्तव्य है। श्रीगुरुपूजा की तरह अपनी अवस्था का स्मरण करते हुए व श्रीगौरांगदेव का ध्यान करते हुए उनका अर्चन करना होगा।

ध्यान मन्त्र :

श्रीमन्मौक्तिकदामबद्धचिकुरं सुस्मेरचन्द्राननं
श्रीखण्डागुरुचारुचित्रवसनं स्रग्दिव्यभूषान्वितम्।
नृत्यावेशरसानुमोदमधुरं कन्दर्पवेशोज्ज्वलं
चैतन्यं कनकद्युतिं निजजनैः संसेव्यमानं भजे ॥

अर्थ :- जिनका मुख मण्डल मधुर हास्य से युक्त है, जिनके प्रफुल्लित मुखमण्डल के चारों ओर काले - काले घुंघराले बाल सुशोभित हैं, जिनके दिव्य शरीर में विचित्र चित्रकारी युक्त वस्त्र हैं, यथायोग्य स्थानों पर चन्दन आदि सुशोभित हैं, सारा शरीर दिव्य-अलंकारों से विभूषित है, जिनके गले में सुन्दर माला सुशोभित है, जिनके मधुर रसानन्द युक्त नृत्य वेश में करोड़ों कामदेवों का सौन्दर्य

फीका पड़ जाता है, जो अपने पार्षदों द्वारा संसेवित हैं - उन कनक की तरह कान्ति वाले श्रीचैतन्य देव का मैं भजन करता हूँ।

इसके बाद "**जय श्रीकृष्णचैतन्य प्रभु नित्यानन्द श्रीअद्वैत गदाधर श्रीवासादि गौरभक्त वृन्द की जय**" का तीन बार पाठ करें।

मानस पूजा - श्रीगुरुपूजा की तरह इस क्षेत्र में भी सोलह, बारह व दस प्रकार के उपचारों द्वारा मानसिक रूप से गौरांग पूजा करने का विधान है।

बाह्य उपचारों द्वारा पूजा - श्रीगुरुदेव से प्राप्त श्रीगौर मन्त्र से श्रीमूर्ति अथवा श्रीशालग्राम में श्रीगौरांगदेव की पूजा करने का विधान है।

स्नान -

स्नान के स्थान पर आमन्त्रित करके स्नान करा रहा हूँ. - इस प्रकार के मानसिक चिन्तन से स्नान पात्र में आसन-पाद्य-आचमन देकर स्नान कराना होगा ।

मन्त्र - "**इदं आसन क्लीं गौराय नमः**" - इस मन्त्र से स्नान पात्र में आसन के लिए चन्दनयुक्त पुष्प-तुलसी या सिर्फ पुष्प रखें।

"**प्रभो ! कृपया स्वागतं कुरु, क्लीं गौराय नमः**"! - इस मन्त्र से प्रभु को आसन पर निमन्त्रित करना चाहिए ।

"**एतत् पाद्यं क्लीं गौराय नमः**" - इस मन्त्र द्वारा स्नान पात्र में श्रीगौरहरि के चरणों में जल प्रदान करें ।

"**इदं आचमनीयं क्लीं गौराय नमः**" - इस मन्त्र द्वारा विसर्जनीय पात्र में जल प्रदान करें ।

इसके बाद मानसिक चिन्तन से ही श्रीगौरहरि जी के अंगों में सुगन्धित तेल इत्यादि मलें तथा "**इदं स्नानीयं क्लीं गौराय नमः**" - कह कर घण्टा बजाते हुए तथा स्तव पाठ करते हुए शंख से सुवासित जल डालते हुए श्रीगौरांगदेव को स्नान कराएं।

स्नान के बाद साफ व सूखे कपड़े से श्री अंगों को साफ करके "**इदं सोत्तरीयं वस्त्र क्लीं गौराय नमः**" - मन्त्र से प्रभु को वस्त्र अर्पण की भावना से दो फल या दो बार जल विसर्जन पात्र में डालें ।

"**इदं आचमनीयं क्लीं गौराय नमः**" - पूर्ववत् ।

श्रीमूर्ति का प्रसादन :

श्रीमन् महाप्रभु सिंहासन में आकर बैठ गये हैं - इस प्रकार की भावना से श्रीमूर्ति को सिंहासन पर निर्दिष्ट स्थान में विराजमान कर दें तथा श्रीमूर्ति के चरणों को स्पर्श करके श्रीहृदय में 8 बार जप करना चाहिए। (यदि श्रीशालग्राम जी का अर्चन हो तो अर्चन पात्र में तुलसी तथा पुष्प देकर शालग्राम को उसके ऊपर स्थापन करना चाहिए।

इसके बाद आसन आदि क्रम से सर्व-उपचारों से पूजा करनी चाहिए। यथा :-

"**इदं आसन क्लीं गौराय नमः**" - इस मन्त्र से अर्चन पात्र में पुष्प व तुलसी अर्पण करें।

"**एतत् पाद्यं क्लीं गौराय नम:**" - इस मन्त्र से विसर्जन पात्र में जल प्रदान करें ।

"**इदं अर्घ्यं क्लीं गौराय नमः**" - इस मन्त्र से अर्चन पात्र में अर्घ्य (गन्ध-पुष्प-तुलसी और जल) प्रदान करें ।

"**इदं आचमनीयं क्लीं गौराय नमः**" - पूर्ववत् ।

"एप मधुपर्क: क्लीं गौराय नमः" - मधुपर्क पात्र में शंख जल व तुलसी प्रदान करें ।

"इदं आचमनीयं क्लीं गौराय नमः" - पूर्ववत् ।

"इदं उपवीतं क्लीं गौराय नमः" - इस मन्त्र से उपवीत अर्पण करें। (उपवीत के अभाव में उपवीत की भावना से अर्चन पात्र में पुष्प प्रदान कर सकते हैं।)

"इदं तिलकं क्लीं गौराय नम:" - इस मन्त्र से श्रीमूर्ति के श्री मस्तक पर ऊर्ध्वपुण्ड तिलक की रचना करें तथा अर्चन पात्र में तुलसी के पत्ते से चन्दन दें ।

"इदं आचमनीयं क्लीं गौराय नम:" - पूर्ववत् ।

"इदं आभरणं क्लीं गौराय नम:" - इस मन्त्र द्वारा अर्चन पात्र में पुष्प अर्पण करें ।[28]

"एष गन्ध: क्लीं गौराय नमः" - इस मन्त्र से तुलसी पत्र द्वारा अर्चन पात्र में चन्दन एवं श्रीमूर्ति के श्रीचरणों में चन्दन का लेपन करना चाहिए। (दो बार) ।

"इदं सगन्धं पुष्पं क्लीं गौराय नमः" - इस मन्त्र द्वारा श्रीमूर्ति के चरणों में व अर्चन पात्र में चन्दनयुक्त पुष्प प्रदान करें (दो बार)

"इदं सगन्धं तुलसीपत्रं क्लीं गौराय नम:" - इस मन्त्र से श्रीमूर्ति के चरणों में व अर्चन पात्र में चन्दनयुक्त तुलसी के पत्ते प्रदान करें (कम से कम दो बार)

---

28 आभरण का अर्थ अलंकार, गहने व सजावट आदि होता है परन्तु भोग लगाने के बाद ही श्रीविग्रहों को अंलकार प्रदान करने चाहिए व उनका श्रृंगार करना चाहिए । हाँ, "इदं आभरणं क्लीं गौराय नमः" कहने के बाद आप श्रीविग्रहों को फूलों का मण्डप, छत्र, चंदवा व यदि ठाकुर जी का झूला हो तो उन्हें प्रदान कर सकते हैं ।

“एष धूप: क्लीं गौराय नमः” - इस मन्त्र द्वारा विसर्जनीय पात्र में जल प्रदान करें ।

“एष दीप: क्लीं गौराय नमः” - इस मन्त्र से विसर्जन पात्र में जल प्रदान करें ।

इसके बाद पुष्पान्जलि, आसन, पाद्य तथा आचमन आदि को पहले की तरह निवेदन करना चाहिए ।

“इदं नैवेद्यं क्लीं गौराय नम:” - इस मन्त्र से नैवेद्य पात्र में शंख जल के साथ तुलसी प्रदान करनी चाहिए ।

“इदं पानकं क्लीं गौराय नमः” - इस मन्त्र से पानक में शंख जल के साथ तुलसी प्रदान करें ।

“इदं पानीयं क्लीं गौराय नमः” - पानीय पात्र में शंख जल प्रदान करें ।

“इदं आचमनीयं क्लीं गौराय नमः” - पूर्ववत् ।

आचमन के बाद श्रीगौरांगदेव सिंहासन पर बैठे हैं - इस प्रकार का चिन्तन करके -

"इदं ताम्बूलं क्लीं गौराय नमः” - ‘ताम्बूल पात्र में शंख जल तथा तुलसी दे।

“इदं माल्यं क्लीं गौराय नमः” - इस मन्त्र के द्वारा श्रीमूर्ति को माला प्रदान करें । (माला के अभाव में माला के मानसिक चिन्तन के साथ-साथ पुष्प प्रदान करें) इसके बाद यथाशक्ति (कम से कम 12 बार) श्रीगौरमन्त्र तथा श्रीगौरगायत्री का जप करना चाहिए ।

तत्पश्चात् श्रीगौरांगदेव की स्तुति व उनको प्रणाम करना चाहिए ।

स्तुति:

ध्येयं सदा परिभवघ्नभीष्टदोहं
तीर्थास्पदं शिवविरिन्चिनुतं शरण्यम्
भृत्यार्तिहं प्रणतपाल भवाब्धिपोतं
वन्दे महापुरुष ते चरणारविन्दम् ॥1॥[29]
त्यक्त्वा सुदुस्त्यज-सुरेप्सित - राज्यलक्ष्मीं ।
धर्मिष्ठ आर्यवचसा यदगादरण्यम् ।
मायामृगं दयितयेप्सितमन्वधावद्
वन्दे महापुरुष ते चरणारविन्दम् ॥2॥[30]

पंचतत्वात्मकं कृष्णं भक्तरूपस्वरूपकम् ।
भक्तावतारं भक्ताख्यं नमामि भक्तशक्तिकम् ॥3॥[31]
प्रणाम : **नमो वेदान्तवेद्याय कृष्णाय परमात्मने ।**
सर्वचैतन्यरूपाय चैतन्याय नमो नम: ॥4॥[32]
आनन्दलीलामयविग्रहाय हेमाभदिव्यच्छविसुन्दराय ।

---

29 अर्थ :- हे शरणागतों के रक्षाकर्ता ! हे महापुरुष ! आप सबके ध्यान करने योग्य हो, आप माया दुखों से छुटकारा दिलाने वाले हो, आप अभीष्ट आशा को पूर्ण करने वाले हो, आप सब तीर्थों के आधार हैं, आप ब्रह्मा, शिवादि के पूजित एवं उनके भी आश्रय स्वरूप हो, आप सेवकों के दुःखों को हरण करने वाले हो तथा संसार रूपी समुद्र से पार कराने वाले हो - मैं आपके पादपद्मो की वन्दना करता हूँ ।1।

30 हे महाप्रभु ! आप धार्मिक लोगों में श्रेष्ठ हो, इसीलिए आपने आर्य ब्राह्मणों के शाप की रक्षा के लिए अत्यन्त दुस्त्यज्य श्रीलक्ष्मी -स्वरूपिणी अपनी पत्नी विष्णुप्रिया देवी को परित्याग करके सन्यास ग्रहण किया (जिसकी विद्यमानता की देवता लोग भी सदैव अभिलाषा करते हैं) तथा परम दयालु होने के कारण आपने माया के पीछे दौड़ने वाले संसारासक्त जीवों के घर-घर जाकर उनका उद्धार किया। मैं आपके चरण कमलों की वन्दना करता हूँ ।2।

31 भक्तरूप (श्रीचैतन्य), भक्त स्वरूप (श्रीनित्यानन्द), भक्तावतार (श्रीअद्वैत), भक्त (श्रीवासादि) और भक्त शक्ति (श्रीगदाधर आदि), इन पंचतत्त्वात्मक श्रीकृष्ण को मैं प्रणाम करता हूँ ।3।

32 वेदान्तवेद्य, श्रीकृष्ण, परमात्मा, सर्वचैतन्य - स्वरूप - श्रीचैतन्यदेव को मैं बार-बार नमस्कार करता हूँ ।4।

तस्मै महाप्रेमरसप्रदाय चैतन्यचन्द्राय नमो नमस्ते ॥5॥[33]
नमो महावदान्याय कृष्णप्रेम प्रदाय ते ।
कृष्णाय कृष्णचैतन्यनाम्ने गौरत्विषे नमः ॥6॥[34]

आत्मार्पण या आत्म समर्पण

अंशो भगवतोऽस्म्यहं सदा दासोऽस्मि सर्वथा ।
तत्कृपा प्रेक्षको नित्यं गौराय स्वं समर्पये ॥
मां मदीयं च सकलं श्रीगौराय समर्पयामि । ।

"**इदं सर्वं क्लीं गौराय नमः**" - इसके बाद श्रीमूर्ति के चरणों में पुष्प प्रदान करें तथा कीर्तन करें ।

ॐ तत् सत् ॐ

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे ।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे ॥

श्री चरणामृत ग्रहण :- इसके बाद भक्ति भाव पूर्वक व निम्नलिखित इलोक उच्चारण के साथ श्रीगौरचरणामृत ग्रहण करें -

अशेष - क्लेशनिःशेषकारणं शुद्धभक्तिदम् ।
गौर पादोदकं पीत्वा शिरसा धारयाम्यहम् ॥

भावार्थ . - अशेष क्लेश को समाप्त कर देने वाले व शुद्ध भक्ति को प्रदान करने वाले - श्री गौरांग-पादोदक को पीकर मैं उसे मस्तक पर धारण करता हूँ।

33 आनन्दलीलामय देहधारी, स्वर्णकान्ति की तरह आलोकिक सुन्दर कान्ति वाले, महाप्रेम - रसदाता - श्रोचैतन्यचन्द्र को मैं बार-बार नमस्कार करता हूँ।5।

34 महावदान्य, कृष्ण प्रेम प्रदाता, गौरकान्ति, श्रीकृष्ण चैतन्य नामधारी - श्रीकृष्ण को मैं नमस्कार करता हूँ. ।6।

श्रीश्री राधाकृष्ण पूजा

श्री श्री गुरु-गौरांग जी की कृपा प्रार्थना करते हुए एवं श्रीगुरुदेव ही श्रीराधाकृष्ण की साक्षात् रूप से सेवा कर रहे हैं क्योंकि वे श्रीराधाकृष्ण के प्रियतम जन हैं और मैं अत्यन्त अज्ञ एवं भगवत् सेवा में असमर्थ जीव हूँ - इस प्रकार की चिन्ता करते हुए श्रीगुरुदेव के आनुगत्य में श्रीश्री राधाकृष्ण का अर्चन करना चाहिए।

श्रीवृन्दावन का ध्यान :

ततो वृन्दावन ध्यायेत् परमानन्दवर्धनम् ।
कालिन्दी जल कल्लोलसंगी -मारुतसेवितम् ॥
नानापुष्प लताबद्ध - वृक्षषण्डैश्च मण्डितम् ।
कोटिसूर्यसमाभासं विमुक्तं षट्तरंगके: ॥
तन्मध्ये रत्नखचितं स्वर्ण सिंहासन महत् ॥

अर्थ - परमानन्द को बढ़ाने वाला, यमुना के जल कल्लोल के संस्पर्श से शीतल पवन द्वारा सेवित, नाना प्रकार के पुष्प- लताओं

द्वारा लिपटे हुए वृक्षों द्वारा सुशोभित, करोड़ों सूर्यों के समान समुज्जवल, षड़विध-तरंगरहित श्रीवृन्दावन का तथा वहाँ पर विराजमान रत्नों से जड़े हुए विशाल स्वर्ण-सिंहासन का ध्यान करें।

रत्न-सिंहासन पर विराजमान श्रीश्रीराधा कृष्ण जी का ध्यान:
दीव्यद्वृन्दारण्यकल्पद्रुमाध: , श्रीमद् रत्नागार सिंहासनस्थौ ।
श्रीश्रीराधा श्रीलगोविन्ददेवौ, प्रेष्ठालीभि: सेव्यमानौ स्मरामि ॥

श्लोक अर्थ - उज्जवल शोभाशाली वृन्दावन में कल्पवृक्ष के नीचे सुन्दर रत्नमन्डित सिंहासन पर अधिष्ठित प्रियतम सखियों के द्वारा सेवित श्री श्रीराधागोविन्द को मैं स्मरण करता हूँ ।

श्रीराधा जी की प्रीति के लिए श्रीकृष्ण का ध्यान -
सत्पुण्डरीक नयन मेघाभं वैद्युताम्बरम् ।
द्विभुज वेणुवक्त्राब्जं वनमालिनमीश्वरम् ॥1॥
दिव्यालंकरणोपेतं सखीभि: परिवेष्टितम् ।
चिदानन्दघनं कृष्णं राधालिङ्गित-विग्रहम् ॥2॥

(श्लोक अर्थ - विशाल, सुन्दर सोने के सिंहासन पर विराजित, कमलनेत्र, मेघकान्ति, पीताम्बरधारी, द्विभुज, मुरलीवदन, वनमालाधारी, दिव्यालंकारों से सुशोभित तथा सखीगण द्वारा परिवेष्ठित एवं श्रीराधाजी द्वारा आलिंगित - चिदानन्द देह वाले भगवान श्रीकृष्ण का मैं ध्यान करता हूँ । (1-2))

श्री श्री गान्धार्विका गिरिधारी का कम से कम तीन बार जयगान करें।

जयगान के बाद सर्वप्रथम सोलह, बारह तथा दस उपचारों से श्री श्री राधाकृष्ण का मानसिक अर्चन करें तथा उसके बाद बाह्योपचार द्वारा पूजा करें ।

बाह्योपचार द्वारा पूजा :

श्री गुरुदेव से प्राप्त अष्टादश-अक्षर वाले श्रीकृष्ण मन्त्र और श्रीराधा पूजा मन्त्र[35] से श्रीमूर्ति में अथवा श्रीशालग्राम में श्रीराधाकृष्ण का अर्चन करना कर्तव्य है ।

स्नान : श्रीराधाकृष्ण का स्नान पात्र में आवाहन करके उन्हें स्नान करा रहा हूँ - इस प्रकार भावना से युक्त होकर स्नान पात्र में आसन आदि देकर स्नान कराना चाहिए । जैसे:

"इदं आसन श्रीं क्लीं राधाकृष्णाभ्यां नमः" - इस मन्त्र द्वारा स्नान पात्र में चन्दन से युक्त तुलसी तथा पुष्पप्रदान करें ।

"कृपया स्वागतं कुरुतदेवौ:"

"श्रीं क्लीं राधाकृष्णाभ्यां नमः" - इस मन्त्र से श्रीराधा-कृष्ण जी को स्नान पात्र में पुष्प व तुलसी द्वारा आसन पर आमन्त्रित करना चाहिए।

"एतत् पाद्यं श्रीं क्लीं राधाकृष्णाभ्यां नमः" - इस मन्त्र से स्नान पात्र में श्रीश्री राधाकृष्ण जी के पादपद्मों में जल प्रदान करें ।

"इदं आचमनीयं श्रीं क्लीं राधाकृष्णाभ्यां नमः" विसर्जनीय पात्र में जल प्रदान करें।

इसके बाद पवित्र भावना द्वारा श्रीराधा-कृष्ण जी के अंगों में सुगन्धित तेल आदि देकर **"इदं स्नानीयं श्रीं क्लीं राधाकृष्णाभ्यां नमः"** - मन्त्र उच्चारण करें, घण्टा बजाते हुए तथा स्तव पाठ करते

---

35 श्रीराधा पूजा मन्त्र -**"रां राधायै: स्वाहा"**!
गायत्री - **"रां राधिकायै विदम्हे प्रेमरूपायै धीमहि, तन्नो राधा प्रचोदयात्।"**

हुए श्रीराधाकृष्ण को शंख जल से स्नान करायें ।

स्नान के बाद सूखे साफ कपड़े से श्रीराधाकृष्ण के श्रीअंग साफ करें:

“इमे सोत्तरीये वस्त्रे श्रीं क्लीं राधाकृष्णाभ्यां नमः” - इस मन्त्र से मैं श्री राधाकृष्ण जी को वस्त्र दे रहा हूँ, इस प्रकार की पवित्र भावना करते हुए दो पुष्प या दो बार जल विसर्जन पात्र में डालें ।

“इदं आचमनीयं श्रीं क्लीं राधाकृष्णाभ्यां नमः” - श्रीगुरु पूजा व गौरांग पूजा की विधि के अनुसार ही आचमन करना होगा।

श्रीमूर्ति का प्रसादन -

श्रीश्रीराधाकृष्ण के स्नानादि के पश्चात् प्रभु सिंहासन में स्थित निर्दिष्ट आसन पर विराजित हो गये हैं, इस प्रकार की भावना से श्रीमूर्ति के चरण(हृदय में) स्पर्श करके मूल मन्त्र और श्रीराधा मन्त्र का आठ बार जप करें; श्रीशालग्राम का अर्चन करने के बाद अर्चन पात्र में तुलसी-पुष्प देकर उसके ऊपर श्रीशालग्राम स्थापन करें ।

आसन आदि क्रम से सोलह प्रकार की पूजा -

“इदं आसन श्रीं क्लीं राधाकृष्णाभ्यां नमः” - इस मन्त्र द्वारा अर्चन पात्र में पुष्प व तुलसी प्रदान करें ।

“एतत् पाद्यं श्रीं क्लीं राधाकृष्णाभ्यां नमः” - इस मन्त्र से विसर्जन पात्र में दो बार जल प्रदान करें ।

“इदं अर्घ्यं श्रीं क्लीं राधाकृष्णाभ्यां नम:” - इस मन्त्र से अर्चन पात्र में गन्ध-पुष्प-तुलसी तथा जल प्रदान करें ।

"इदं आचमनीयं श्रीं क्लीं राधाकृष्णाभ्यां नमः" - पूर्ववत्।

"एष मधुपर्क: श्रीं क्लीं राधाकृष्णाभ्यां नमः" - इस मन्त्र से मधुपर्क पात्र में शंख-जल व तुलसी प्रदान करें ।

"इदं आचमनीयं श्रीं क्लीं राधाकृष्णाभ्यां नम: " - पूर्ववत्।

"इदं उपवीतं क्लीं श्री कृष्णाय नमः" - इस मन्त्र से श्रीकृष्ण को उपवीत प्रदान करें। उपवीत के अभाव में अर्चन पात्र में पुष्प प्रदान करें ।

"इदं तिलकं श्रीं क्लीं राधाकृष्णाभ्यां नमः" - इस मन्त्र से श्रीमूर्ति में ऊर्ध्वपुण्ड की रचना करनी होगी तथा तुलसी-पत्र से चन्दन लगाकर अर्चन पात्र में अर्पण करना होगा ।

"इदं आचमनीयं श्रीं क्लीं राधाकृष्णाभ्यां नमः " - पूर्ववत्।

"इमानि आभरणानि श्रीं क्लीं राधाकृष्णाभ्यां नमः" - अर्चन पात्र में पुष्प प्रदान करें।

"एष गन्ध: श्रीं क्लीं राधाकृष्णाभ्यां नम:" - इस मन्त्र से तुलसी के दो पत्तों में चन्दन लगाकर अर्चन पात्र में प्रदान करें व श्रीमूर्ति के चरणों में चन्दन का लेपन करें ।

"इदं सगन्धं पुष्प श्रीं क्लीं राधाकृष्णाभ्यां नमः" - श्रीमूर्ति के चरणों में व अर्चन पात्र में कम से कम दो बार चन्दन एवं पुष्प प्रदान करें ।

"इदं सगन्धं तुलसी पत्रं क्लीं कृष्णाय नमः" - इस मन्त्र के द्वारा श्रीकृष्ण जी के चरणों में और अर्चन पात्र में कम से कम दो बार चन्दन युक्त तुलसी प्रदान करें ।

"एष धूप: श्रीं क्लीं राधाकृष्णाभ्यां नमः" - इस मन्त्र द्वारा विसर्जनीय पात्र में जल प्रदान करें ।

"एष दीप: श्रीं क्लीं राधाकृष्णाभ्यां नमः" - इस मन्त्र से विसर्जनीय पात्र में जल प्रदान करें ।

इसके बाद पुष्पांजलि, आसन, पाद्य व आचमन पहले की तरह निवेदन करते हुए पुनः -

"इदं नैवेद्य श्रीं क्लीं राधाकृष्णाभ्यां नमः" - उक्त मन्त्र द्वारा नैवेद्य पात्र में शंख-जल और तुलसी प्रदान करें ।

"इदं पानकं श्रीं क्लीं राधाकृष्णाभ्यां नमः" - इस मन्त्र से पानक पात्र में शंख-जल और तुलसी प्रदान करें ।.

"इदं पानीयं श्रीं क्लीं राधाकृष्णाभ्यां नमः" - इस मन्त्र से पानीय पात्र में शंख जल व तुलसी प्रदान करें ।

"इदं आचमनीयं श्रीं क्लीं राधाकृष्णाभ्यां नमः" -(पूर्ववत्)

आचमन के बाद श्री श्री राधाकृष्ण सिंहासन परविराजित हैं, ऐसी भावना करके - **"इदं ताम्बूलं श्रीं क्लीं राधाकृष्णाभ्यां नमः"** - इस मन्त्र से ताम्बूल पात्र में शंख जल व तुलसी प्रदान करें ।

"इमे माल्ये श्रीं क्लीं राधाकृष्णाभ्यां नमः" - इस मन्त्र द्वारा श्री मूर्ति को माला पहनाएँ; माला के अभाव में अर्चन पात्र में पुष्प प्रदान करें । इसके बाद यथाशक्ति (कम से कम 12 बार) मूल मन्त्र, काम गायत्री, राधामन्त्र व राधा गायत्री जप करके स्तुति व प्रणाम करना आवश्यक है।

श्री राधामन्त्रः **ॐ ह्रीं श्रीराधिकायै नम:।**

श्रीराधा-गायत्रीः ॐ ह्रीं श्रीराधिकायै विद्महे गान्धर्विकायै धीमहि तन्नो राधा प्रचोदयात्।

श्रीकृष्ण स्तुति :-

(ॐ) नमो विश्वस्वरूपाय विश्वस्थित्यन्तहेतवे ।
विश्वेश्वराय विश्वाय गोविन्दाय नमो नमः ॥
नमो विज्ञानरूपाय परमानन्दरूपिणे ।
कृष्णाय गोपीनाथाय गोविन्दाय नमो नमः ॥
नमः कमलनेत्राय नमः कमलमालिने ।
नमः कमलनाभाय कमलापतये नमः ॥
बर्हापीडाभिरामाय रामायाकुण्ठमेधसे ।
रमा-मानस-हंसाय गोविन्दाय नमो नमः ॥
कंसवंशविनाशाय केशिचाणूरघातिने ।
वृषभध्वजवन्द्याय पार्थसारथये नमः ॥
वेणुनादविनोदा य गोपालायाहिमर्दिने ।
कालिन्दीकूललोलाय लोलकुण्डलधारिणे ॥
बल्लवीवदनाम्भोज-मालिने नृत्यशालिने ।
नमः प्रणतपालाय श्रीकृष्णाय नमो नमः ॥
नमः पापप्रणाशाय गोवर्धनधराय च ।
पूतनाजीवितान्ताय तृणावर्तासुहारिणे ॥
निष्कलाय विमोहाय शुद्धायाशुद्धवैरिणे ।
अद्बितीयाय महते श्रीकृष्णाय नमो नमः ॥
प्रसीद परमानन्द प्रसीद परमेश्वर ।
आधिव्याधिभुजङ्गेन दष्टं मामुद्धर प्रभो ॥
श्रीकृष्ण रुक्मिणीकान्त गोपीजनमनोहर ।
संसारसागरे मग्नं मामुद्धर जगद्गुरो ॥
केशव क्लेशहरण नारायण जनार्दन ।
गोविन्द परमानन्द मां समुद्धर माधव ॥

प्रणाम मन्त्र:-

हे कृष्ण ! करुणासिन्धो ! दीनबन्धो ! जगत्पते ! ।
गोपेश ! गोपिकाकान्त ! राधाकान्त ! नमोऽस्तुते ॥

श्रीकृष्ण स्तुति का अर्थ: विश्व स्वरूप, विश्व की स्थिति व नाश के हेतु, विश्वेश्वर, समस्त विश्व में व्याप्त श्रीगोविन्द को मैं बार-बार नमस्कार करता हूँ।

विज्ञानरूपी, परमानन्द रूपी गोपीनाथ, गोपाल - श्रीकृष्ण को मैं बार-बार नमस्कार करता हूँ।

कमलनेत्र, कमलमाली, कमलनाभ-कमलापति को मैं नमस्कार करता हूँ ।

शिखिपुच्छ से जिनका चूड़ा सुशोभित है, जो असीम बुद्धि से युक्त हैं, जो लक्ष्मी जी के मानस सरोवर में हंस की तरह विहार करते हैं तथा जो गऊओं का पालन करते हैं,उन श्रीकृष्ण को मेरा नमस्कार है।

कंस-वंश-ध्वंसकारी, केशी-चाणूरघाती, वृषभध्वज के पूज्य श्रीपार्थसारथी को मेरा नमस्कार है।

वेणुनाद-विनोदी, कालियमर्दनकारी, कालिन्दीकूल के प्रति लोलुप, चंचल कुण्डलधारी, गोपीमुख-कमलमाली, नृत्यपरायण तथा शरणागतों का पालन करने वाले गोपाल-श्रीकृष्ण को मेरा बार-बार नमस्कार है।

पाप विनाशन, श्रीगोवर्धनधारी, पूतना जीवन-घाती तथा तृणावर्त नामक असुर के प्राणों को हरण करने वाले श्रीकृष्ण को मेरा प्रणाम है।

निष्फल, मोहनाशक, जिनका विग्रह विशुद्ध सत्वमय है, जो पापीजनों के वैरी, अद्वितीय व महान हैं - उन श्रीकृष्ण को मैं बार-बार नमस्कार करता हूँ।

हे परमानन्द ! हे परमेश्वर ! आप प्रसन्न होइए । हे प्रभो ! आधि- व्याधि रूप सर्प द्वारा दंशित - मुझ जीव का उद्धार करें।

हे कृष्ण ! हे गोपीजन मनोहर ! हे रुक्मिणी-कांत ! हे जगद् गुरो! मेरा उद्धार करें - कारण, मैं संसार रूपी सागर में पड़ा हुआ हूँ।

हे केशव ! हे क्लेश हरण ! हे नारायण ! हे जनार्दन ! हे राधाप्रिय! हे माधव ! हे गोविन्द! - मेरा उद्धार करें।

प्रणाम मन्त्र का अर्थ :- हे करुणासिन्धु, दीनबन्धु | जगत्पते, गोपेश, गोपिकाकान्त, राधाकान्त - हे कृष्ण ! आपको मेरा नमस्कार है।

श्रीराधा स्तुति :-

राधा रासेश्वरी रम्या रामा च परमात्मनः ।
रसोद्भवा कृष्णकान्ता कृष्णवक्षःस्थलस्थिता ॥
कृष्णप्राणाधिदेवी च महाविष्णोः प्रसूरपि ।
सर्वाद्या विष्णुमाया च सत्या नित्या सनातनी ॥
ब्रह्मस्वरूपा परमा निर्लिप्ता निर्गुणा परा ।
वृन्दा वृन्दावने त्वं च विरजातटवासिनी ॥
गोलोकवासिनी गोपी गोपिका गोपमातृका ।
सानन्दा परमानन्दा नन्दनन्दनकामिनी ॥
वृषभानुसुता शान्ता कान्ता पूर्णतमा तथा ।
काम्या कलावती कन्या तीर्थपूता सती शुभा ॥
संसारसागरे घोरे भीतं मां शरणागतम् ।
सर्वेभ्योऽपि विनिर्मुक्तं कुरु राधे सुरेश्वरी ॥
त्वत्पादपद्मयुगले पादपद्मालयार्चिते ।
देहि मह्यं परां भक्तिं कृष्णेन परिसेविते ॥

प्रणाम मन्त्र:-

तप्तकाञ्चनगौराङ्गि राधे वृन्दावनेश्वरी ।
वृषभानुसुते देवि प्रणमामि हरिप्रिये ॥
महाभावस्वरूपे त्वं कृष्णप्रियावरीयसि ।
प्रेमभक्तिप्रदे देवि राधिके त्वां नमाम्यहम् ॥

श्रीराधा स्तव का अर्थ -

आप (श्रीराधा जी) महारास लीला में प्रमुख रूप से रमण करने वाली हैं, आप परमात्मा श्रीकृष्ण को आनन्द प्रदान करने वाली हैं । आप आनन्द की जननी हैं।

आप श्रीकृष्ण के वक्षस्थल में रहने वाली हैं, आप श्रीकृष्ण के प्राणों की अधिष्ठात्री देवी हैं, आप महाविष्णु को प्रसव करने वाली हो, सर्वाद्या शक्ति हो, नित्य हो, सनातनी हो, ब्रह्मस्वरूपिणी हो, आप पराशक्ति हो निर्लिप्ता हो, त्रिगुणों से अतीत हो, परा-वृन्दावन में वृन्दा हो, आप विरजातटवासिनी व गोलोकवासिनी हो, आप गोपी हो व गोपियों में श्रेष्ठा हो एवं गोपियों की मूल स्वरूपा हो। आप आनन्दमयी हो व परमानन्दा

हो। आप नन्द नन्दन की कामिनी हो, वृषभानु राजा की कन्या हो । शान्ता हो कमनीया हो, पूर्णतमा हो, काम्या हो, कलावती हो, कन्या तीर्थ की पवित्रता-विधात्री हो, सती हो, शुभा हो - हे सुरेश्वरी राधे ! घोर संसार सागर में पतित मुझ शरणागत को सभी भयों से मुक्त करो। आप ब्रह्मा एवं लक्ष्मी जी द्वारा अर्चित हैं। आप श्रीकृष्ण द्वारा सेवित हैं - आप मुझे अपने पादपद्मों में पराभक्ति प्रदान करो ।

प्रणाम मन्त्र का अर्थ -

हे तपाये हुए सोने के समान गौर-कान्ति वाली ! हे वृन्दावनेश्वरी! हे वृषभानुनन्दिनी ! हे हरिप्रिये ! हे देवी ! हे श्रीमती राधिके ! आपकों मैं बारम्बार प्रणाम करता हूँ ।

हे महाभाव स्वरूपिणी! आप श्रीकृष्ण की सभी प्रियाओं में सर्वश्रेष्ठ हैं। हे प्रेम-भक्ति प्रदान करने वाली देवी राधिके! मैं आपको (बारम्बार) प्रणाम करता हूँ।

स्वात्मार्पण या आत्म समर्पण

अंशो भगवतोऽस्म्यहं सदा दासोस्मि सर्वथा ।
श्रीराधिका कृपापेक्षी स्वात्मानुमर्पयाम्यहम् ॥
मां मदीयन्च सकलं श्री श्री राधाकृष्णाभ्यां समर्पयामि ।

अर्थः मैं भगवान का अंश हूँ । मैं सर्वदा सर्वतोभाव से उनका ही सेवक एवं श्रीराधिका जी का कृपापेक्षी हूँ । मैं श्री श्रीराधाकृष्ण के चरणों में अपने आपको समर्पण करता हूँ। मैं अपने आप को और मेरा जो कुछ भी है - उस सभी को श्री श्रीराधाकृष्ण के चरणों में अर्पण करता हूँ।

इसके बाद श्रीकृष्ण को निवेदित कुछ पुष्प व तुलसी श्रीराधा जी के हाथ में दे।

"इदं सर्व श्रीं क्लीं राधाकृष्णाभ्यां नमः " - इस मन्त्र के द्वारा श्रीमूर्ति के चरणों में पुष्प और जल प्रदान करें।

तथा इसके बाद पद्यपंचक पाठ करें :-

संसार-सागरान्नाथ पुत्र-मित्र-गृहाङ्गनात् ।
गोप्तारौ मे युवामेव प्रपन्न-भय-भञ्जनौ ॥
योऽहं ममास्ति यत्किञ्चित् इह लोके परत्र च ।
तत्सर्वं भवतोरेव चरणेषु समर्पितम् ॥
अहमप्यपराधानामालयस्त्यक्तसाधनः ।
अगतिश्च ततो नाथौ भवन्तौ मे परा गतिः ॥
तवास्मि राधिकानाथ कर्मणा मनसा गिरा ।
कृष्णकान्ते तवैवास्मि युवामेव गतिर्मम ॥
शरणं वां प्रपन्नोऽस्मि करुणानिकराकरौ ।
प्रसादं कुरुतं दास्यं मयि दुष्टेऽपराधिनि ॥

इसके बाद विज्ञप्तिपंचक पाठ करें -

मत्समो नास्ति पापात्मा नापराधी च कश्चन ।
परिहारेऽपि लज्जा मे किं ब्रुवे पुरुषोत्तम ॥
युवतीनां यथा यूनि यूनां च युवतौ यथा ।
मनोऽभिरमते तद्वत् मनो मे रमतां त्वयि ॥
भूमौ स्खलितपादानां भूमिरेवावलम्बनम् ।
त्वयि जातापराधानां त्वमेव शरणं प्रभो ॥
गोविन्दवल्लभे राधे प्रार्थये त्वामहं सदा ।
त्वदीयमिति जानातु गोविन्दो मां त्वया सह ॥
राधे वृन्दावनाधीशे करुणामृतवाहिनी ।
कृपया निजपादाब्ज-दास्यं मह्यं प्रदीयताम् ॥

हे नाथ ! हे शरणागत- भय - भंजन, आप दोनों ही संसार सागर और पुत्र मित्र पूर्ण गृहांगन से मेरी रक्षा करने वाले हैं ।

इस लोक में व परलोक में मैं और मेरा कहकर जो कुछ है वह सभी (अभी)

आपके चरणों में समर्पण करता हूँ । मैं सभी अपराधों का भण्डार हूँ । मैं साधनहीन और दुर्गति प्राप्त जीव हूँ। अतएव आप दोनों ही मेरे प्रभु व परमगति हैं । हे राधिकानाथ! मैं शरीर, मन और वाक्य से आपका ही हूँ। आप दोनों ही मेरी गति हैं। आप करुणा के आधार हो । मैं आप दोनों की ही शरण लेता हूँ । आप इस अपराधी दुष्ट जन को कृपा पूर्वक अपनी दासता प्रदान करें ।

"हे पुरुषोत्तम ! मेरे समान पापी और अपराधी और कोई नहीं है, इसलिए आपसे क्षमा चाहते हुए भी मुझे लज्जा हो रही है। मैं और क्या कहूँ, युवतियों का मन नवयुवक में एवं युवकों का मन नवयुवतियों में जिस प्रकार रत होता है, मेरा मन भी आप में उसी प्रकार रत हो जाये । जिसके पैर भूमि में फिसल जायें तो भूमि ही उसका अवलम्बन होती है, उसी प्रकार आपके चरणों के अपराधियों के आप ही आश्रय हैं ।

हे गोविन्द - प्रिया राधिके ! में आपके पास हमेशा प्रार्थना करता हूँ कि आप और गोविन्द मुझे अपना समझ कर जानें । हे वृन्दावनेश्वरी! हे करुणामृतवाहिनी राधे ! आप कृपा करके मुझे अपने पादपद्मों का दासत्त्व प्रदान करें।

उपाह्न पूजा

वेणु, माला, श्रीवत्स एवं कौस्तुभ की पूजा - जैसे:
एते गन्ध पुष्पे ॐ श्रीमुखवेणवे नम: ॥
एते गन्ध पुष्पे ॐ वक्षसि वनमालायै नम: ॥
एते गन्ध पुष्पे ॐ दक्षस्तनोदर्ध्वे श्रीवत्साय नम: ॥
एते गन्ध पुष्पे ॐ सव्यस्तनोर्ध्वे कौस्तुभाय नमः ॥

इसके बाद श्रीगुरु-वैष्णवों को श्री श्री राधाकृष्ण का चरणामृत एवं निर्मालय प्रदान करें।

"**इदं श्रीराधाकृष्ण चरणामृतं ऐं गुरुवे नम:**" -

इस मन्त्र द्वारा श्री राधाकृष्ण के चरणामृत को अर्चन पात्र में देना चाहिए।

"**इदं प्रसाद निर्माल्यं ऐं गुरुवे नमः**" - श्रीमूर्ति के हाथ में।

इसके बाद श्री राधाकृष्ण के चरणामृत को निम्नलिखित श्लोक का उच्चारण करते हुए सेवन करना चाहिए तथा सिर पर धारण करना चाहिए।

श्रीराधाकृष्ण पादोदक प्रेम भक्तिदं मुदा।
भक्तिभरेण वै पीत्वा शिरसा धारयाम्यहम् ॥

तुलसी सेवा

प्रार्थना - **निर्मिता त्वं पुरा देवैरर्चिता त्वं सुरासुरैः ।**
तुलसि हर मेऽविद्यां पूजां गृह्ण नमोऽस्तु ते ॥

स्नान मन्त्र - **(ॐ) गोविन्द बल्लभां देवीं भक्तचैतन्यकारिणीम्।**
स्नापयामि जगद्धात्रीं कृष्णभक्तिप्रदायिनीम् ।

अर्घ्य मन्त्र - **श्रिय: श्रिये श्रियावासे नित्यं श्रीधरं सत्कृते ।**
भक्त्या दत्त मया देवि अर्घ्यं गृह नमोस्तु ते ॥

पूजा मन्त्र - **निर्माल्य-गन्ध-पुष्पादि पानीयजलं ॐ तुलस्यै नम:।**
एते गन्धपुष्पे ॐ तुलस्यै नमः ॥
इदं श्रीकृष्णचरणामृतं ॐ तुलस्यै नम: ॥
इदं महाप्रसादनिर्माल्यादिकं सर्व ॐ तुलस्यै नम: ॥
इदं आचमनीयं ॐ तुलस्यै नम: ॥।

प्रणाम - **ॐ वृन्दायै तुलसीदेव्यै प्रियायै केशवस्य च ।**
कृष्ण भक्तिप्रदे देवि सत्यवत्यै नमो नम: ॥

स्तुति[36] - **महाप्रसाद जननी सर्वसौभाग्यवर्द्धिनी ।**
आधिव्याधिहरा नित्यं तुलसी त्वां नमोस्तु ते ॥

---

36 हे तुलसी देवी ! देवताओं ने पहले ही आपके तत्त्व को निश्चय किया है। देवता और असुर आपका अर्चन करते हैं। आप मेरी अविद्या हरण करें, मेरी पूजा ग्रहण करें। मैं आपको प्रणाम करता हूँ।

महाप्रसाद सम्मान कीर्तन

श्रीमहाप्रसाद को सबसे पहले नमस्कार करें, जयध्वनि दें, प्रसाद की महिमा कीर्तन करें तथा उसके बाद भगवान का नाम संकीर्तन करते - करते महाप्रसाद का सेवन करना चाहिए। महाप्रसाद ग्रहण करने के बाद मुख शुद्धि के लिए सेव्य के अर्थात् भगवान् के विलासी द्रव्य तथा ताम्बूल इत्यादि ग्रहण करना उचित नहीं है।

नैवेद्यं जगदीशस्य अन्नपानादिकञ्च यत् ।
भक्ष्याभक्ष्यविचारश्च नास्ति तद्भक्षणे द्विजाः ॥
ब्रह्मवन्निर्विकारं हि यथा विष्णुस्तथैव तत् ।
विकारं ये प्रकुर्वन्ति भक्षणे तद् द्विजातयः ॥
कुष्ठव्याधिसमायुक्ताः पुत्रदारविवर्जिताः ।
निरयं यान्ति ते विप्रास्तस्मान्नावर्तते पुनः ॥1॥
(विष्णुपुराण)

हे द्विजगण ! अन्न-जल इत्यादि जो नैवेद्य श्रीकृष्ण को निवेदित हो चुके हों - उन्हें पाने में भक्ष्य-अभक्ष्य का विचार नहीं करना चाहिए क्योंकि वह भगवत्-प्रसाद ब्रह्म की तरह निर्विकार अर्थात जड़विकार रहित होता है। विष्णु जिस प्रकार से पूज्य होते हैं, उनका प्रसाद भी उसी प्रकार से पूज्य होता है। जो द्विज उस प्रसाद को खाने में किसी प्रकार के विकार की कल्पना करते हैं-वे कुष्ट रोग से पीड़ित होते हैं; यही नहीं वे स्त्री एवं पुत्रों द्वारा परित्याग कर दिये जाते हैं तथा मरने के -बाद नरक में जाते हैं। (1)

महाप्रसादे गोविन्दे, नाम-ब्रह्मणि वैष्णवे।
स्वल्पपुण्यवतां राजन् विश्वासो नैव जायते॥(2)

शरीर अविद्या जाल, जडेन्द्रिय ताहे काल, जीवे फेले विषय-सागरे।
तारमध्ये जिह्वा अति, लोभमय सुदुर्मति, ताके जेता कठिन संसारे॥(3)

कृष्ण बड दयामय, करिबारे जिह्वा जय, स्वप्रसाद-अन्न दिलो भाई।
सेइ अन्नामृत पाओ, राधाकृष्ण-गुण गाओ, प्रेमे डाक चैतन्य-निताई॥

मध्याह्नकालीन भोग तथा आरती

दोपहर में 12 बजे के मध्य ही अर्थात 12 बजे से पहले भोग एवं आरती सम्पन्न करना उचित है श्रीकृष्ण, (या श्री श्रीराधा-कृष्ण) श्रीगौरांग महाप्रभु और श्री गुरुदेव - सभी को अलग- अलग थाली में भोग लगाना चाहिए । कम से कम श्रीकृष्ण और श्रीगौरांग के लिए दो थाली में भोग लगाना ही चाहिए । हाँ, यदि कोई बहुत ही असमर्थ हो तो वह एक थाली में भोग लगा सकता है।

भगवान् का मुकुट, वंशी इत्यादि खोलकर भोग निवेदन करना चाहिए तथा थाली के प्रत्येक भोग द्रव्य के ऊपर तुलसी अवश्य देनी चाहिए । यदि श्रीकृष्ण को अलग से भोग निवेदन किया गया हो तो श्रीकृष्ण को आचमन इत्यादि देने के बाद उनका (श्री कृष्ण का) प्रसाद सबसे पहले श्रीराधा जी को निवेदन करना चाहिए।

श्री गुरुदेव ही भोग निवेदन कर रहे हैं, इस प्रकार की भावना रखना उचित है।

"एषं पुष्पान्जलि: क्लीं कृष्णाय नमः" -

"इदं आसनं क्लीं कृष्णाय नमः" - इस मन्त्र द्वारा आसन पर पहले की तरह पुष्पादि अर्पण करने चाहिए ।

"एतत् पाद्यं क्लीं कृष्णाय नम:" - इस मन्त्र से विसर्जन पात्र में जल प्रदान करना चाहिए ।

"इदं आचमनीयं क्लीं कृष्णाय नमः" - इस मन्त्र से विसर्जन पात्र में जल प्रदान करना चाहिए ।

"इदं अन्न-व्यजनं- पानीयादिक सर्वं क्लीं कृष्णाय नमः"

उपरोक्त मन्त्र उच्चारण एवं घण्टाध्वनि के साथ - साथ प्रत्येक द्रव्य में तुलसी पत्र युक्त शंख जल निवेदन करना चाहिए ।

अथवा "**इदं अन्नं क्लीं कृष्णाय नमः**" तथा "**इदं व्यंजनं, इदं दुग्धं, इदं पानीयं**" इत्यादि - इस प्रकार के मन्त्रों द्वारा अलग-अलग निवेदन किया जा सकता है।

अथवा "**एषः पुष्पान्जलि श्रीं क्लीं राधाकृष्णाभ्यां नमः**" इत्यादि - मन्त्र के द्वारा श्री राधाकृष्ण को एकत्र भी निवेदन किया जाता है।

समस्त द्रव्य निवेदन के बाद गर्भ-मन्दिर से बाहर आकर श्रीकृष्ण के भोजन काल तक प्रतीक्षा करनी चाहिए । इतनी देर भोग आरती कीर्तन करना कर्त्तव्य है।

श्रीभोग आरती

भज भक्तवत्सल श्री गौरहरि
श्रीगौरहरि - सोहि गोष्ठविहारी, नन्द-यशोमति चित्तहारी ॥1॥
बेला हो'लो , दामोदर, आइस एखानो।
भोगमन्दिरे ब'सि', करह भोजन ॥2॥
नन्देर निर्देशे बैसे गिरवरधारी
बलदेव-सह सखा बैसे सारि सारि ॥3॥
शुक्ता-शाकादि भाजि नालिता कुष्माण्ड ।
डालि डालना दुग्ध-तुम्बी दधि मोच-खण्ड 4॥
मुद्गबड़ा माषबड़ा रोटिका घृतान्न ।
शष्कुली पिष्टक क्षीर पुलि पायसान्न ॥5॥
कर्पूर अमृतकेलि रंभा क्षीरसार ।
अमृत रसाल अम्ल द्वादश प्रकार ॥6॥

लुचि चिनि सरपुरी लाड्डु रसावली ।
भोजन करेन कृष्ण हये कुतूहली ॥7॥
राधिकार पक्व अन्न विविध व्यन्जन ।
परम आनन्दे कृष्ण करेन भोजन ॥8॥
छलेबले लाड्डु खाए श्रीमधुमंगल ।
बगल बजाए आर देय हरिबोल ॥9॥
राधिकादि गणे हेरि' नयनेर कोणे ।
तृप्त हये खाय कृष्ण यशोदा - भवने ॥10॥

यहाँ तक भोग- आरती कीर्तन करने के बाद तीन बार ताली बजाकर, मन्दिर में जाकर आचमनीय तथा ताम्बूल पहले बताई गई विधि के अनुसार निवेदन करना चाहिए एवं बाहर आकर फिर आगे का कीर्तन करें जो कि इस प्रकार है -

भोजनान्ते पिए कृष्ण सुवासित वारि ।
सबे मुख प्रक्षालय ह'ये सारि सारि ॥11॥
हस्त मुख प्रक्षालिया यत सखीगणे ।
आनन्दे विश्राम करे बलदेव-सने ॥12॥
जाम्बुल रसाल आने ताम्बूल मसाला ।
ताहा खे'ये कृष्णचन्द्र सुखे निद्रा गेला ॥13॥
विशालाक्ष शिखि-पुच्छ-चामर ढुलाय ।
अपूर्व शयाय कृष्ण सुखे निद्रा याय ॥14॥

इसके बाद पिछले अध्याय में कहे गए नियमानुसार "**श्रीं राधिकायै नमः**" - मन्त्र द्वारा श्रीराधा को निवदेन करने के बाद बाहर आकर पुनः कीर्तन करें -

(नोट :-यदि श्रीराधा-कृष्ण को एक ही थाली में भोग निवेदन किया गया हो तो इसकी आवश्यकता नहीं है।)

यशोमती - आज्ञा पे’ये धनिष्ठा- आनित ।
श्रीकृष्ण प्रसाद राधा भुंजे ह’ये प्रीत ॥15॥

बाद में श्रीगुरुदेव, सभी सखियों, सभी वैष्णवों, श्रीपौर्णमासी, सभी ब्रजवासियों को वही प्रसाद निवेदन करते हुए आगे कीर्तन करें-

ललितादि सखीगण अवशेष पाय ।
मने-मने सुखे राधा-कृष्ण गुण गाय ॥16॥
हरि- लीला एकमात्र याहार प्रमोद ।
भोगारति गाय सेइ भक्तिविनोद ॥17॥

श्री श्रीराधा-कृष्ण जी का प्रसाद श्री गुरुदेव, सर्व-सखियों, इत्यादि को क्रम से निम्न प्रणाली द्वारा निवेदन किया जाता है।

निवदेन प्रणाली -

“इदं महाप्रसाद नैवेद्यं ऐं गुरुवे नमः“ - इस मन्त्र से श्री गुरुदेव के नैवेद्य पात्र में जल प्रदान करें।

“इदं पानीयं ऐं गुरुवे नमः“ - इस मन्त्र से गुरुदेव हेतु, भावना द्वारा पीने के पानी की बजाए पुष्प - जल अर्चन पात्र में प्रदान करें।

“इदं आचमनीयं ऐ गुरुवे नमः” - पहले की तरह।

“इदं प्रसाद ताम्बूल ऐं गुरुवे नमः”- इस मन्त्र के द्वारा ताम्बूल की भावना करके पुष्प या जल गुरुदेव जी के नैवेद्य पात्र में प्रदान करें।

“इदं श्रीकृष्ण चरणामृतं ॐ सर्वसखिभ्यो नमः“- इस मन्त्र द्वारा श्रीकृष्ण का चरणामृत सब सखियों को देने की भावना से पृथक पात्र में रखें।

"इदं प्रसाद निर्माल्य ॐ सर्वसखिभ्यो नमः" -उपरोक्त विधानानुसार।

"इदं महाप्रसाद नैवेद्यं ॐ सर्वसखिभ्यो नमः" -उपरोक्त विधानानुसार।

"इदं पानीयं ॐ सर्वसखिभ्यो नम:" -उपरोक्त विधानानुसार।

"इदं आचमनीयं ॐ सर्वसखिभ्यो नमः"- इस मन्त्र द्वारा आचमनीय जल विसर्जन पात्र में डालें।

"इदं प्रसाद - ताम्बूलं ॐ सर्वसखिभ्यो नमः"-इस मन्त्र द्वारा ताम्बूल की भावना से पुष्प या जल एक पृथक पात्र में डालें।

इस प्रकार सभी वैष्णवों, पौर्णमासी तथा ब्रजवासियों को एक-एक करके निवेदन करना चाहिए, अथवा ।

निम्न प्रकार मन्त्र उच्चारण करते हुए सभी को एक साथ निवेदन भी कर सकते हैं। जैसे -

"इदं सर्व ॐ सर्वसखिभ्यो नम:"
"इदं सर्व ॐ श्रीपौर्णमास्यै नम:"
"इदं सर्व ॐ सर्वब्रजवासिभ्यो नम:"
"इदं सर्व ॐ सर्ववैष्णवेभ्यो नम:"

श्री गुरुदेव, श्री गौरांग, श्री श्रीराधा कृष्ण को अलग-अलग करके अर्थात् तीन थाली में भोग लगाने से भोग सर्वप्रथम श्रीकृष्ण (या श्रीराधाकृष्ण) को फिर श्रीगौरांग महाप्रभु जी को और उनके बाद श्री गुरुदेव को निवेदन करना चाहिए। भोग निवेदन करने के पश्चात् अर्चनकारी को चाहिए कि वह मन्दिर से बाहर आकर उनके भोजन काल की भोग आरती कीर्तन करते हुए प्रतीक्षा करता रहे ।

दो थाली भोग लगाने पर श्री गौरांग महाप्रभु का प्रसाद क्रमानुसार श्रीगुरुदेव और सभी वैष्णवों को निवेदन करना चाहिए ।

भोग लगाने के बाद आरती -

भोग लगाने के बाद भगवान् के श्रीविग्रहों को मुकुट व वंशी आदि पहना कर नीराजन करें । (नीराजन का अर्थ है मूलमन्त्र के द्वारा आरती द्रव्यों का संस्कार करना) श्री श्रीराधाकृष्ण, श्री श्रीगौरांग और श्री श्रीगुरुदेव जी को उनके अपने - अपने मन्त्रों द्वारा अलग-अलग तीन बार पुष्पांजली देनी चाहिए । नीराजन- आरती कीर्तन, विभिन्न प्रकार के वाद्य, घण्टा ध्वनि, स्तव स्तुति व नाम कीर्तन के द्वारा करना कर्तव्य है। नीराजन का प्रत्येक द्रव्य मूलमन्त्र के द्वारा श्रीकृष्ण जी को निवेदन करके आरती करनी चाहिए तथा क्रमानुसार १-धूप, २-दीप, ३-जल से भरे शंख, ४-वस्त्र, ५-पुष्प तथा ६-चामर इत्यादि के द्वारा निर्मच्छन (घुमाना) करना चाहिए तथा सबसे अन्त में शंख ध्वनि के साथ आरती समाप्त होनी चाहिए।

शयन मन्त्र

आगच्छ शयन-स्थानं प्रियाभिः सह केशव ।
दिव्य-पुष्पाढ्य-शय्यायां सुखं विहर माधव ॥

इस मन्त्र के द्वारा श्रीभगवान् को शयन कराना चाहिए तथा इसके बाद क्रमानुसार सुवासित जल, कर्पुर के सहित ताम्बूल, माल्य, अनुलेपन तथा पुष्पान्जलि-नियमानुसार निवेदन करके, दण्डवत् प्रणाम करने के बाद मन्दिर के दरवाजे बन्द कर देने चाहिए। ये बात ध्यान में रहे कि हमेशा उत्तम पुष्पों द्वारा अन्जलि देनी चाहिए ।

श्री पुरुषसूक्त मन्त्र द्वारा भगवत् अर्चन विधि

1. ॐ सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात् ।
स भूमिं विश्वतो वृत्वा अत्यतिष्ठद्दशाङ्गुलम् ॥[37]
इति आसनम् ।

2. ॐ पुरुष एवेदं सर्वं यद्भूतं यच्च भाव्यम् ।[38]
उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति ॥
इति स्वागतम् ।

3. ॐ एतावानस्य महिमाऽतो ज्यायांश्च पूरुषः ।
पादोऽस्य विश्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि ॥
इति पाद्यम् ।

4. ॐ त्रिपादूर्ध्व उदैत् पुरुषः पादोऽस्येहाभवत्पुनः ।
ततो विष्वङ् व्यक्रामत् साशनानशने अभि ॥
इति अर्घ्यम् ।

5. ॐ ततो[39] विराड़जायत विराजो अधिपुरुष: ।
स जातो अत्यरिच्यत पश्चाद् भूमिमथो पुरः ॥
इति आचमनीयम् ।

---

37 पाठान्तर में, स भूमि विश्वतो वृत्वाऽत्यतिष्ठद्दशागुंलम् ॥

38 पाठान्तर में, एवेदँ - एवेदं, भाव्यम् - भव्यम्

39 पाठान्तर में ततो- तस्मात्

6. ॐ तस्मात् यज्ञात् सर्वहुत: संभूतं पृषदाज्यम् ।
पशूंस्ताँश्चक्रे वायव्यान् आरण्या ग्राम्याश्च ये ॥
इति मधुपर्क: ।

7. ॐ तस्मात् यज्ञात् सर्वहुत ऋच: सामानि जज्ञिरे ।
छन्दांसि जज्ञिरे तस्मात् यजुस्तस्माद् अजायत ॥
इति स्नानम् ।

8. ॐ तस्माद् अश्वा अजायन्त ये के चोभयादत: ।
गावो ह जज्ञिरे तस्मात् तस्मात् जाता अजावय: ॥
इति वस्त्रम् ।

9. ॐ तं यज्ञं बर्हिषि प्रौक्षन् पुरुषं जातमग्रत: ।
तेन देवा अयजन्त साध्या ऋषयश्च ये ॥
इति यज्ञसूत्रम् ।

10. ॐ यत् पुरुषं व्यदधु: कतिधा व्यकल्पयन् ।
मुखं किमस्यासीत् किं बाहू किमूरू-पादा उच्येते[40] ॥
इति अलंकार: ।

11. ॐ ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद् बाहू राजन्य: कृत: ।
ऊरू तद् अस्य यद् वैश्य: पदभ्यां शूद्रोऽजायत ॥
इति गन्ध: ।

12. ॐ चन्द्रमा मनसो जातश्चक्षो: सूर्योऽजायत ।
श्रोत्राद्वायुश्च प्राणश्च मुखादग्निरजायत[41] ॥
इति पुष्पम् ।

---

40 पाठान्तर में, मुखं किमस्य कौ बाहू काऊरु - पादा उच्येते

41 पाठान्तर में, मुख्याद इन्द्रश्चाग्निश्च प्राणाद् वायुरजायत

13. ॐ नाभ्या आसीद् - अन्तरीक्षं शीर्ष्णो द्यौः समवर्तत।
पदभ्यां भूमिर्दिश: श्रोत्रात् तथा लोकाँ अकल्पयन् ॥
इति धूप:।

14. ॐ यत् पुरुषेण हविषा देवा यज्ञमतनृतं ।
बसन्तोऽस्यासीदाज्यं ग्रीष्म ईधमः शरद् हरि: ॥
इति दीप: ।

15. ॐ सप्तास्यासन् परिधयस्त्रि: सप्तसमिध: कृता: ।
देवा यद् यज्ञं तन्वाना अबध्नन् पुरुष पशुम् ॥
इति नैवेद्यम् ।

16. ॐ यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन् ।
ये ह नाकं महिमान: सचन्त: यत्र पूर्वे साध्या: सन्ति देवा:॥
इति नमस्कार: ।

शुक्ल यजुर्वेद - संहिता के 31वें अध्याय के महीधर भाष्य का हिन्दी अनुवाद -

(इन सोलह मन्त्रों के ऋषि नारायण हैं, देवता परमात्मा हैं। पहले पन्द्रह श्लोकों में अनुष्टुभ छन्द है। सोलहवें मन्त्र का छन्द त्रिष्टुभ् है। इनका विनियोग अर्थात लक्ष्य मोक्ष होता है।

पूर्व अध्याय के अन्त में ब्राह्मण इत्यादि सभी कहे गये हैं - इनके अवयवी पुरुष परमात्मा हैं जिनकी इस अध्याय में स्तुति की गयी है। श्रीमद् भागवत् में इन्हें ही हिरण्यगर्भ के अन्तर्यामी गर्भोदकशायी-द्वितीय पुरुषावतार कहा गया है। इनके स्तवकारी ब्रह्मा जी हैं तथा इस स्तुति के प्रत्येक मन्त्र को 'काण्डिका' कहते हैं ।

उस आदि पुरुष से (भूत, इन्द्रिय, गुणमय विराट) ब्रह्माण्ड देह उत्पन्न हुआ। उसी विराट शरीर को अधिकरण करके देहाभिमानी एक पुरुष उत्पन्न हुआ । वही विराट पुरुष अतिरिक्त देव-तिर्यक व मनुष्य रूप में परिणित हुआ । इसके बाद देवताओं तथा जीवों के रहने के लिए भूमि की सृष्टि की गयी भूमि सृष्टि के बाद उन्हीं जीवों के शरीरों की सृष्टि की गयी ।(5)

जिसमें सभी प्रकार का हवन किया जा सकता है, इसी सर्वहुत पुरुष मेध नामक यज्ञ से पुरुष द्वारा दधिमिश्र आज्य (घी) अर्थात दिध आज्य प्रभृति भोग्य आदि सम्पादित हुए । वह पुरुष वायु जिनके देवता हैं, उन्होंने ही पशुओं को उत्पन्न किया। वे पशु जंगल में रहने वाले हिरन इत्यादि व गांवों में रहने वाले गाय - घोड़े इत्यादि हैं।(6)

उस सर्वहुत यज्ञ से वह सभी उत्पन्न हुए जिससे सभी यज्ञ किये जाते हैं अर्थात उससे ऋक्, साम, यजु: व गायत्री आदि सभी छन्द उत्पन्न हुए । इनके बिना यज्ञ सिद्ध नहीं होते।(7)

उस यज्ञ से सभी अश्व, व उसी की तरह के पशु गधे तथा ऊपर व नीचे दोनों भागों में दंत युक्त पशु उत्पन्न हुए । उसी यज्ञ से गाय, अज और भेड़ उत्पन्न हुईं, कारण पशुओं के बिना भी यज्ञ सिद्ध नहीं होता।(8)

वही यज्ञ अर्थात यज्ञ के साधनभूत सृष्टि से पहले पुरुष रूप में उत्पन्न, उस पुरुष को पशुत्व की भावना करते हुए यूपकाष्ठ में बाँधकर मानस यज्ञ में प्रोक्षण आदि के द्वारा शुद्ध किया गया । उस पुरुष पशु के द्वारा देवता लोगों ने मानस यज्ञ सम्पूर्ण किया । वे देवता ही, जो ऐसा करते हैं वे सृष्टि के लिए साधन योग्य साध्यगण और मन्त्र दृष्टा ऋषि लोग होते हैं।(9)

प्रजाति के प्राणरूप देवता लोगों ने जिस समय पुरुष को उत्पन्न किया, उस समय न जाने कितनी ही प्रकार की कल्पनाएं की गयीं? इस पुरुष का मुख कौन हुआ? दोनों बाहु व दोनों जांघें कौन हुईं ? तथा दोनों पद कौन हुआ? (10)

ब्राह्मण अर्थात ब्रह्मत्व जाति विशिष्ट पुरुष - इस प्रजापति के मुख से उत्पन्न हुए। क्षत्रिय जाति विशिष्ट पुरुष बाहु से निकले। उसी समय इस प्रजापति की दोनों जांघों से वैश्य जाति सम्पादित हुई व चरणों से शूद्र जाति उत्पन्न हुई।(11)

उस पुरुष के मन से चन्द्रमा, चक्षुओं से सूर्य, कर्ण से वायु और प्राण तथा मुख से अग्नि उत्पन्न हुई ।(12)

जिस प्रकार प्रजापति के मन से चन्द्र आदि देवताओं की कल्पना की गई, उसी प्रकार अन्तरिक्ष के लोकों की कल्पना की गई ।(13)

प्रजापतियों के नाभिकमल से सभी अन्तरिक्ष, मस्तक से स्वर्ग, दोनों चरणों से भूमि, कर्णों से दिशाएं उत्पन्न हुईं । पहले कही गई विधि के अनुसार फल प्रदान करने में उत्सुक सभी काल में प्रजापति से भू-प्रभृति लोकों की कल्पना की गयी ।

जिस समय पहले कहे गये क्रमानुसार देवों के शरीर प्रकट हुए थे तो देवता लोगों ने, परवर्ती सृष्टि करने के लिए बाह्य द्रव्य उत्पन्न न होने से, पुरुष स्वरूप को ही मन-मन में हवि(रूज्ञ) रूप से संकल्प करके पुरुष नामक हवि के द्वारा मानस यज्ञ किया था उस समय बसन्त ऋतु को ही इस यज्ञ में घी रूप से संकल्प किया गया, ग्रीष्म को लकड़ी रूप से, शरद को पुरोडास इत्यादि हवन के द्रव्य रूप से कल्पना किया गया।(14)

जिस समय प्रजापति ने प्राण व इंद्रिय रूपी देवताओं के मानस यज्ञ के लिए पुरुष पशु का बन्धन किया अर्थात विराट पुरुष की ही पशु रूप से भावना की (इसी अभिप्राय से चौदहवें श्लोक में "यत् पुरुषेण हविषा" इस प्रकार बताया गया है) उसी समय आदित्य के साथ गायत्री आदि सातों छन्द संकल्पित यज्ञ के प्रतिनिधि बने । बारह महीने, पाँच ऋतु, तीनों लोक और सूर्य इन कुल इक्कीस की यज्ञ- काष्ठ रूप से भावना की गई अथवा क्षीरोधा- आदि सातों समुद्र परिधि हुए । भारत वर्ष में यज्ञ होते रहते हैं, इसीलिए समुद्रों को परिधित्त्व कहा गया । गायत्री आदि सप्त अतिजगति आदि सप्त एवं कृति प्रभृति सप्त, ये ही कुल मिलाकर इक्कीस छन्द समिध् हैं ।(15)

विस्तार रूप से दिये गए यज्ञ को संक्षेप में कहते हैं -

(प्रजापति को प्राणरूप देवता लोगों ने) जैसा कि कहा गया है, मानस संकल्प रूप यज्ञ के द्वारा यज्ञस्वरूप प्रजापति की पूजा की । उस पूजा से जगत् रूप कार्य समूह के धारक मुख्य भूत समूह हुआ। यहाँ तक सृष्टि के प्रतिपादक भाग का अर्थ प्रस्तुत किया गया ।

अब उपासना और उसके फल के अनुवादक भाग के अर्थ का संक्षेप दिया जाता है। जिस विराट प्राप्ति रूप स्वर्ग में पुरातन विराट उपाधि रूप साधक लोग अवस्थान कर रहे हैं, वही विराट प्राप्ति रूप स्वर्ग (नाक प्रेष्ठ लोक) को महात्मा लोग प्राप्त होते हैं । इसके द्वारा सृष्टि प्रवाह की नित्यता प्रदर्शन कर रहे हैं। (16)

इति पुरुष: सूक्तानुवादक: ।

प्रत्येक व्यक्ति के लिए आवश्यक है कि वह शास्त्र के विधानानुसार दीक्षा ग्रहण करके दृढ़ श्रद्धा भक्ति के साथ भगवान् का अर्चन करे। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, स्त्री अथवा शूद्र सभी को दीक्षा के पश्चात् शालग्राम रूपी भगवान का अर्चन करने का अधिकार है।

श्रील जीव गोस्वामीपाद ने दीक्षा प्राप्त गृहस्थ भक्तों, विशेषतः संपत्तिशाली गृहस्थ भक्तों के लिए अर्चनमार्गीय विधि का पालन करने की अत्यधिक आवश्यकता को प्रदर्शित किया है। तथापि कलिकाल में कीर्तन-भक्ति की ही प्रधानता होने के कारण "यद्यपि अन्या भक्तिः कलौ कर्त्तव्या तदा कीर्तनाख्य-भक्ति-संयोगेनैव"—अर्थात् कलिकाल में भक्ति के अन्य साधनों को भी कीर्तन-भक्ति के साथ करना परम आवश्यक है। इस विचार का अवश्य पालन करना चाहिए।